ISSN: 3049-2211

कृषक मंच

मासिक कृषि पत्रिका

खंड-1, अंक-6 जून- 2025

Krishakmanch.com

कृषक मंच

मासिक कृषि पत्रिका

ISSN: 3049-2211

सम्पादक मंडल

डा. देवराज सिंह

मुख्य सम्पादक
सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष
सब्जी विज्ञान विभाग
कृषि विज्ञान विभाग, इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)।

प्रिया पाण्डेय

सहायक मुख्य सम्पादक
शोधार्थी
ए.के.एस. विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)।

सहायक सम्पादक

डा. विक्रमा प्रसाद पाण्डेय
पूर्व अधिष्ठाता (उद्यान महाविद्यालय)
आ. न. दे. कृ. एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)।

डा. अरविन्द कुमार चौरसिया
सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग (मेघालय)।

डा. महेन्द्र कुमार यादव
सहायक प्राध्यापक (सब्जी विज्ञान)
आर.एन.बी. ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)।

श्री कल्याण सिंह
स्वतंत्र लेखक/शोधार्थी
बांदा कृ. एवं प्रौ. वि.वि., बांदा (उ.प्र.)।

डा. रविशंकर पटेल
सहायक प्राध्यापक (कीट विज्ञान)
स.व.भा.प.कृ. एवं प्रौ. वि.वि., मेरठ (उ.प्र.)।

डा. रविकेश कुमार पाल
सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)
रामा विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)।

डा. सरिता
सहायक प्राध्यापक (पौध रोग विज्ञान)
आर.एन.बी. ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)।

डा. सचि गुप्ता
सहायक प्राध्यापक (पुष्प विज्ञान)
आ. न. दे. कृ. एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)।

डा. विवेक पाण्डेय
सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)
इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)।

डा. देवेश तिवारी
सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, तूरा कैंपस (मेघालय)।

डा. कुमार अंशुमान
सहायक प्राध्यापक (मृदा विज्ञान)
के.एन.आई.पी.एस.एस., सुल्तानपुर (उ.प्र.)।

डा. मंजीत कुमार
सहायक प्राध्यापक
लिंगायस विद्यापीठए फरीदाबाद, हरियाणा।

डा. वर्तिका सिंह
सहायक प्राध्यापक (फल विज्ञान)
आई.टी.एम. विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)।

ISSN: 3049-2211

विषय वस्तु

क.सं.	विवरण	पृष्ठ सं.
1	चाउ–चाउ की वैज्ञानिक खेती।	4–6
2	पान की खेती: किसानों के लिए एक लाभदायक व्यवसाय।	7–9
3	चरोटा (*Cassia tora*): नैनोप्रौद्योगिकी में उभरता एक जैविक संसाधन।	10–11
4	जलवायु परिवर्तन के दौर में टमाटर और प्याज की फसलें: बढ़ते दाम और घटती पैदावार।	12–13
5	टिकाऊ कृषि में जैविक खेती की भूमिका।	14
6	एरोबिक चावल की खेती: फायदे और नुकसान।	15–17
7	तेंदू फल: मध्य भारत का स्वर्णिम खजाना।	18–19
8	छत्तीसगढ़ की भाजी संस्कृति: पारंपरिक सब्जियों की स्वास्थ्य और सांस्कृतिक धरोहर।	20–22
9	आधुनिक खेती में मृदा परीक्षण की भूमिका।	23–24
10	सब्जियों में नैनो उर्वरक का उपयोग: लाभ और सावधानियाँ।	25–26
11	धीमी गति से खराब होने वाले कृषि उत्पादों के लिए प्रसंस्करण तकनीकें।	27–28
12	मृदा उर्वरता में सुधार के लिए फसल अवषेश प्रबन्धन।	29
13	मिर्च के प्रमुख कीटों का जैविक नियंत्रण।	30–31

चाउ-चाउ की वैज्ञानिक खेती

शुभम– सब्जी विज्ञान विभाग, महाराणा प्रताप बागवानी विश्वविद्यालय, करनाल।
प्रीति यादव– सब्जी विज्ञान विभाग, सीसीएस हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार।

चाउ–चाउ, चायोट स्क्वैश, बेंगलुरु कथिकाई, चाउ–चाउ थोगयाल एक बीज वाला सजीव प्रजनक कद्दू है। यह उत्तर पूर्वी क्षेत्र के आदिवासी समुदायों की आहार प्रणाली में महत्वपूर्ण है। यह मेघालय के हर रसोई के बगीचे में पाया जाता है। यह एक बारहमासी जड़ वाली बेल है जो खाने योग्य फल देती है। फल के अलावा, तना, कोमल पत्तियाँ और कंद मूल भी खाए जाते हैं। जड़, तना और बीज में उच्च कैलोरी मान और कार्बोहाइड्रेट सामग्री होती है। इसे मुख्य रूप से बीज (बीज सहित पूरा फल)/अंकुरित फलों के माध्यम से प्रचारित किया जाता है।

चाउ–चाउ के स्वास्थ्य लाभ

- **हृदय की सुरक्षा के लिए चायोट का उपयोगः** फाइटोकेमिकल्स से भरपूर चायोट रक्त प्रवाह को बेहतर बनाने में एक प्रमुख भूमिका निभाता है, जिससे उच्च रक्तचाप नियंत्रित होता है। अपने सबसे महत्वपूर्ण अंग, हृदय के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए इस सब्जी को अपने दैनिक आहार में शामिल करें।
- **लिवर की कार्यप्रणाली में सुधारः** फैटी लीवर एक खतरनाक बीमारी है, और यह शराब न पीने वालों में भी हो सकती है। यह सब्जी लीवर में जमा वसा को काफी हद तक कम करती है और खराब कोलेस्ट्रॉल के स्तर को भी कम करती है। चाउ–चाउ के नियमित सेवन से चयापचय गतिविधि सक्रिय होती है और वसा को संसाधित करने में लीवर की क्षमता में सुधार होता है।
- **रक्त शर्करा को नियंत्रित करता हैः** चाउ–चाउ को मधुमेह रोगियों के आहार का हिस्सा होना चाहिए। अध्ययनों से पता चलता है कि चाउ–चाउ में कुछ रासायनिक यौगिकों की मौजूदगी इंसुलिन संवेदनशीलता में सुधार करती है।
- **कैंसर से बचावः** एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर चाउ–चाउ मुक्त रेडिकल्स से लड़ता है और इस प्रकार कैंसर कोशिकाओं की प्रगति को धीमा करता है, खासकर ल्यूकेमिया और सर्वाइकल कैंसर से पीड़ित लोगों में। कैंसर रोगियों के आहार चार्ट में इसे शामिल करने की दृढ़ता से अनुशंसा की जाती है।
- **उम्र बढ़ने की प्रक्रिया को धीमा करता हैः** यह सुपर सब्जी ऑक्सीडेटिव तनाव को प्रभावी रूप से कम कर सकती है, जिसका शरीर की कोशिकाओं पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है, जिससे त्वचा सुस्त और रूखी दिखने लगती है। इस प्रकार, शरीर को कोशिका क्षति से बचाता है, जिससे त्वचा अंदर से चमकती है।

जलवायु और मिट्टी

जलवायु

चाउ–चाउ एक गर्म मौसम की फसल है जिसे अधिमानतः ठंडी जलवायु परिस्थितियों में अच्छी नमी के साथ उगाया जाता है। विकास के लिए इष्टतम तापमान 18–22˚C है। यह सर्दियों के मौसम में मध्यम तापमान में उगाया जाता है। 4.4˚C से कम तापमान पौधे को नुकसान पहुंचाता है और 29˚C से ऊपर के तापमान पर फूल झड़ जाते हैं और छोटे–छोटे आकार के फल लगते हैं। यह पाले के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है।

मिट्टी

पर्याप्त नमी और उच्च कार्बनिक पदार्थ वाली एक उपजाऊ, सूखी दोमट मिट्टी चाउ–चाउ उगाने के लिए आदर्श होगी। चाउ–चाउ के लिए आदर्श pH 5.5–6.5 है।

किस्में– मेघालय लोकल, ब्रॉड ग्रीन, पॉइंटेड ग्रीन और ओवल ग्रीन इस क्षेत्र के लिए अनुशंसित किस्में हैं।

बुवाई

चाउ–चाउ को आमतौर पर अंकुरित फलों द्वारा प्रचारित किया जाता है जो जीवित अंकुरण दिखाते हैं। आमतौर पर पूरे फल को बीज के रूप में लगाया जाता है। हालाँकि, ठंडे भंडारण की स्थिति (10˚C) में रखने पर बीज के अंकुरित होने में देरी हो सकती है। 15–20 सेमी से ऊपर के तने की कटिंग का भी उपयोग किया जा सकता है।

भूमि की तैयारी

इसके विकास के लिए अच्छी तरह से ढीली, अच्छी तरह से सूखा हुआ मिट्टी की आवश्यकता होती है, जिसमें कार्बनिक पदार्थ भरपूर मात्रा में हों। जनवरी और फरवरी में, 0.5×0.5×0.5 मीटर आकार के गड्ढे खोदे जाते हैं। गोबर की खाद को मिट्टी में मिलाया जाता है और गड्ढों को गोबर की खाद के एक तिहाई से भर दिया जाता है और अंकुरित फलों को सीधे गड्ढे के केंद्र में लगाया जाता है। इस फसल के लिए गड्ढों में उगाने की प्रणाली को अनुकूलित किया जाता है ताकि खोदी गई मिट्टी लंबे समय तक बेल को सहारा दे सके।

बीज की दर

पूरी तरह से पके हुए फलों का उपयोग किया जाता है, जो जल्दी उगते हैं। चूंकि यह वानस्पतिक रूप से फैलता है, इसलिए बीज की दर रोपण के लिए आवश्यक फलों की संख्या से निर्धारित होती है। बीज की दर प्रति हेक्टेयर लगभग 1,000–1,200 फल होती है। प्रत्येक फल का उपयोग रोपण सामग्री के रूप में किया जाता है, क्योंकि इसमें एक बीज होता है।

बुवाई का समय– वर्षा ऋतु

अंतर/रोपण दूरी

0.5 मीटर × 0.5 मीटर × 0.5 मीटर आकार के गड्ढों में 3–2 मीटर की दूरी पर रोपण किया जाता है।

खाद और उर्वरक

उर्वरक की मात्रा मिट्टी, जलवायु और खेती की प्रणाली पर निर्भर करती है। भूमि की तैयारी के समय अच्छी तरह से सड़ी हुई

ISSN: 3049-2211

गोबर की खाद 15–20 टन प्रति हे. डाली जाती है। कुछ उत्पादक राख, बकरी की खाद, मवेशी की खाद और अमोनियम सल्फेट डालते हैं। अमोनियम सल्फेट 57 ग्राम/गड्ढे की दर से डाला जाता है। इससे फलों का आकार और कुल उपज में सुधार होता है। खेत की खाद सबसे संतोषजनक प्रतीत होती है, और इसे विकास से पहले शुरुआती वसंत में डाला जाना चाहिए। एनपीके/ 120:80:80 किग्रा/हेक्टेयर, फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी खुराक और नाइट्रोजन की आधी खुराक बेल के समय और नाइट्रोजन की बची हुई आधी खुराक फूल आने से पहले डालें।

प्रशिक्षण और छंटाई

प्रशिक्षण

घर के बगीचे में 2 मीटर की ऊँचाई पर बेलों के लिए पंडाल या जाली लगाई जाती है, बेलों को छोटे पेड़ों पर चढ़ने की भी अनुमति दी जाती है। पूर्वोत्तर भारत में ज़्यादातर जाली बांस से बनाई जाती है जो सिर की ऊँचाई के बराबर होती है ताकि कटाई और दूसरे कामों के लिए बेलों के नीचे चलना आसान हो। 5 फीट की ऊँचाई पर बांस के खंभे लगाकर और उसके बाद क्रिस क्रॉस वायर जाल लगाकर बोवर भी तैयार किया जा सकता है। बेल की लंबाई ज़मीन से 30 सेमी होने के बाद बोवर पर प्रशिक्षण शुरू किया जाना चाहिए। एक बार फसल जम जाने के बाद, टेंड्रिल्स की वजह से शाखाएँ आसानी से फैल जाती हैं।

छंटाई

साल में दो बार फल लगने का मौसम होता है और हर मौसम के अंत में बेलों की छंटाई की जाती है, जिससे तने का सिर्फ़ 1.5 मीटर का छोटा हिस्सा रह जाता है।

सिंचाई

मेघालय जैसे पूर्वोत्तर क्षेत्र में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि यह वर्षा आधारित परिस्थितियों में उगाया जाता है, लेकिन अच्छी वृद्धि के लिए पानी की निरंतर आपूर्ति आवश्यक है। चाउ–चाउ में स्वस्थ वृद्धि और फल उत्पादन के लिए उचित सिंचाई महत्वपूर्ण है।

सिंचाई के लिए महत्वपूर्ण चरण

- **वनस्पति चरण–** स्वस्थ बेल विकास को बढ़ावा देने के लिए नियमित सिंचाई आवश्यक है।
- **फूल आने के चरण–** अच्छे फल लगने के लिए फूल आने के दौरान पर्याप्त नमी महत्वपूर्ण है।
- **फल आने का चरण–** फल बनने और विकास के दौरान, लगातार नमी बड़े और बेहतर गुणवत्ता वाले फल पैदा करने में मदद करती है। स्प्रिंकलर सिंचाई के उपयोग से परागण के दौरान मधुमक्खियों की गतिविधि बाधित हो सकती है जिसके परिणामस्वरूप फूल झड़ सकते हैं।

खरपतवार प्रबंधन

सर्दियों में रहने वाले कीटों को हटाने के लिए निराई करना आवश्यक है। कीटों और बीमारियों के वैकल्पिक मेजबान के रूप में कार्य करने के अलावा, खरपतवार कृन्तकों को आकर्षित कर सकते हैं जो फसल को गंभीर नुकसान पहुंचा सकते हैं। पहले साल में चायोट के लिए निराई–गुड़ाई बहुत ज़रूरी है क्योंकि वे अपने नीचे उगने वाले खरपतवारों से मुकाबला करने के लिए पूरी छतरी नहीं बनाते हैं, जबकि दूसरे साल से पौधों की अच्छी तरह से विकसित पूरी छतरी उनके नीचे उगने वाले खरपतवारों को दबाने में सक्षम हो जाती है, इसलिए निराई की तीव्रता कम हो सकती है। खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए फसल चक्र अपनाया जा सकता है, खड़ी फसल को नुकसान पहुँचाए बिना हाथ से निराई भी की जा सकती है, और मल्चिंग की जा सकती है। रासायनिक नियंत्रण के रूप में, रोपण से पहले, पैराक्वाट या ग्लाइफोसेट (राउंडअप) 8000–1200 मिली/एकड़ का उपयोग किया जा सकता है। यह एक गैर–चयनात्मक शाकनाशी के रूप में भी काम करता है, क्योंकि चायोट के युवा तनों के हरे रंगद्रव्य अवशेषों को अवशोषित करते हैं। आजकल बेंसुलाइड (प्रीफ़र) भी पसंद किया जाता है जो एक संकीर्ण श्रेणी और स्थायी शाकनाशी है।

फलों की तुड़ाई

तुड़ाई का सबसे अच्छा मौसम अक्टूबर से दिसंबर और मई से जून के बीच होता है। फूल आने के लगभग 30 दिनों में फल बाजार में बिकने लायक आकार में आ जाते हैं और पूरी तरह से पकने से पहले ही उन्हें तोड़ लिया जाता है। कोमल फलों की कटाई एक मौसम में 2–3 महीने तक चलती है।

फसल की पैदावार

पहले साल में एक पौधे से 70–100 फल (40–50 किलोग्राम) मिलते हैं। दूसरे साल में 500–600 फल मिलते हैं। मेघालय में औसतन 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज दर्ज की गई है।

कटाई के बाद संभालना

फलों की कटाई और संभाल सावधानी से करनी चाहिए ताकि कटने, चोट लगने और बीमारियों के फैलने से बचा जा सके। इसे आमतौर पर ठंडे कमरे में या हवा के ज़रिए पहले से ठंडा किया जाता है। बाजार में, इसे फाइबर बोर्ड के डिब्बों में डिवाइडर के साथ पैक किया जाता है, प्रत्येक टुकड़ा एक फिल्म बैग में, सिंगल लेयर में पैक किया जाता है। फलों को 10–15 डिग्री सेल्सियस और 85–90% आर.एच. पर एक महीने तक संग्रहीत किया जा सकता है। ग्रेडिंग के दृष्टिकोण से, चाउ–चाउ को "एक्स्ट्रा" वर्ग, वर्ग I और वर्ग II में वर्गीकृत किया जा सकता है।

रोग

पाउडरी फफूंदः यह एक फफूंद रोग है (एट्र्सिफे प्रजाति के कारण) जो फसल को नुकसान पहुंचाता है। यह अक्सर बहुत गंभीर हो जाता है। सबसे पहले पत्तियों की निचली सतह पर आधे या पूरे

ISSN: 3049-2211

सफेद गोलाकार पैच या धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। गंभीर मामलों में, पैच आपस में मिल जाते हैं और पत्तियों की सतह को ढक लेते हैं और पत्तियां झड़ जाती हैं।

नियंत्रण– पाउडरी फफूंद को नियंत्रित करने के लिए, 5–6 दिनों के अंतराल पर कम से कम तीन बार, 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में बाविस्टिन का छिड़काव किया जाता है।

डाउनी फफूंद–

यह (स्यूडोपेर्नोस्पोरा प्रजाति) के कारण होने वाला एक फफूंद रोग है। यह उच्च आर्द्रता वाले क्षेत्रों में प्रचलित है। इस रोग की विशेषता पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीले कोणीय धब्बे बनना है। यह रोग तेजी से फैलता है और तेजी से पत्तियों के झड़ने के कारण पौधे को मार देता है।

नियंत्रण– इस रोग को नियंत्रित करने के लिए सप्ताह में एक बार डायथेन एम–45 (0.2%) जैसे फफूंदनाशक स्प्रे का प्रयोग प्रभावी है।

प्रमुख कीट–पतंगे और उनका प्रबंधन

1. माइट (*टेट्रानाइकस आर्टिके, पैरापोनीचस कॉर्डेरोई और यूटेट्रानाइकस बैंक्सी*) 3 प्रजातियों में से, 80% आबादी *टेट्रानाइकस आर्टिके* द्वारा कवर की जाती है जबकि अन्य दो कुल आबादी का 10% हिस्सा बनाते हैं। वे बहुत गर्म और शुष्क अवधि में हमला करते हैं और छोटी पत्तियों को खाना शुरू करते हैं और धीरे–धीरे वे छोटे फलों पर हमला करते हैं। पत्तियों का पीला पड़ना और फलों पर साफ पपड़ी बनना संक्रमण के कुछ लक्षण हैं। यह फलों की बीमारी स्कैब (स्केबीज/मेंज) फैलाता है।

नियंत्रण– माइट संक्रमण को नियंत्रित करने के लिए, सबसे पहले सीमावर्ती क्षेत्रों में माइट की निगरानी की आवश्यकता होती है। माइटसाइड्स का विवेकपूर्ण उपयोग किया जा सकता है जिसमें एक्रामाइट, एग्री–मेक, ब्रिगेड, डैनिटोल, ओबेरॉन, पोर्टल, ज़ील आदि शामिल हैं।

2. लाल कद्दू भृंग (*ऑलाकोफोरा फेवीकोलिस*)– यह अंकुरण और फूल अवस्था में हमला करता है। विनाशकारी अवस्थाएँ लार्वा और वयस्क रूप हैं। वे ऊपर बताई गई अवस्थाओं में पत्तियों और फूलों को खाते हैं। मिट्टी में प्यूपा बनते हैं।

नियंत्रण–पुराने पौधों को जलाने, जुताई करने और फसल की कटाई के बाद खेतों को धूप में रखने जैसी सांस्कृतिक प्रथाओं से वयस्क, लार्वा और प्यूपा नष्ट हो सकते हैं। जैविक नियंत्रण जैसे मिट्टी में नीम के तेल की खली, ब्यूवेरिया बेसियाना, पार्थेनियम प्रजाति के पौधे का अर्क आदि का प्रयोग भी समान रूप से प्रभावी है। सिंथेटिक पाइरेथ्रोइड्स (डेल्टामेथ्रिन 0.004% और फेनवेलरेट 0.01%) का प्रयोग लगभग एक सप्ताह तक भृंग को नियंत्रित करने में प्रभावी रहा।

3. एपिलैचना बीटल (एपिलाचना प्रजाति)– पत्तियों और कोमल भागों पर आक्रामक रूप से फ़ीड करता है। विनाशकारी चरण हैंरू ग्रब और वयस्क। वे पत्तियों पर कंकालनुमा पैच और लेस जैसी उपस्थिति बनाते हैं जो बाद में सूख सकते हैं।

नियंत्रण– दूर के खेत में फसल चक्रण, साप्ताहिक आधार पर 25, 50 और 100 ग्राम/एल सांद्रता की श्रृंखला में एनएसकेई का पर्ण आवेदन, एनोना स्क्वैमोसा (3 एमएल/एल पानी) बीज का अर्क आबादी को 76% तक कम कर सकता है। मैलाथियान, पैराथियान, लैम्ब्डा–साइहेलोथ्रिन, पाइरेथ्रिन, स्पिनोसैड मेथॉक्सीक्लोर, रोटेनोन आदि जैसे सिंथेटिक कीटनाशक भी इसके खिलाफ प्रभावी हैं।

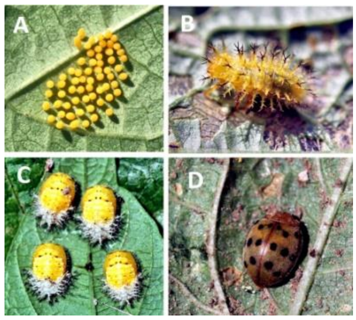

4. छोटे कीटों में डायफेनिया हाइलिनाटा एल., डी. नाइटिडालिस शामिल हैं। मेलोइडोगाइन इनकॉग्निटा और हेलिकोटिलेनचस प्रजाति सबसे महत्वपूर्ण नेमाटोड हैं जो जड़ों को सड़ने का कारण बनते हैं। एम्पोस्का सोलाना चायोट कर्ल रोग के वाहक के रूप में कार्य करता है।

■■■

ISSN: 3049-2211

पान की खेती: किसानों के लिए एक लाभदायक व्यवसाय

स्नेहल गुप्ता एवं उज्ज्वल कुमार
पी.एच.डी. शोधार्थी
पादप कार्यकी, कृषि जैव रसायन, औषधीय एवं सुगंधित पौधे विभाग, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ।

परिचय

पान (नागबल्ली या ताम्बूल) एक बहुवर्षीय बेल है, जिसका उपयोग भारत में पूजा–पाठ, सामाजिक समारोहों, और औषधीय प्रयोजनों के लिए प्राचीन काल से किया जाता रहा है। पान की पत्तियों को चूना, कत्था, और सुपारी के साथ चबाने की परंपरा न केवल मुंह को शुद्ध करती है, बल्कि पाचन क्रिया को भी तेज करती है। भारत में पान की खेती लगभग 50,000 हेक्टेयर क्षेत्र में की जाती है, और यह बांग्लादेश, श्रीलंका, मलेशिया, सिंगापुर, थाईलैंड, और फिलीपींस जैसे देशों में भी लोकप्रिय है।

उत्तर प्रदेश, विशेष रूप से महोबा, पान की खेती के लिए प्रसिद्ध है। महोबा में पान की खेती की शुरुआत 9वीं शताब्दी में चंदेल शासकों द्वारा की गई थी। यह क्षेत्र आज भी अपनी उच्च गुणवत्ता वाली पान की खेती में अग्रणी स्थान रखता है। हालांकि, गुटखा के बढ़ते प्रचलन, सिंचाई की समस्याओं, और कच्चे माल की कमी के कारण पान की खेती का क्षेत्रफल कम हुआ है, फिर भी यह किसानों के लिए एक लाभदायक व्यवसाय बना हुआ है। बिहार का मगही पान भी अपनी अनूठी विशेषताओं के लिए प्रसिद्ध है, जिसे 2018 में भौगोलिक संकेतक (GI) टैग प्राप्त हुआ, जो इसकी विशिष्टता और सांस्कृतिक महत्व को रेखांकित करता है।

पान की खेती का महत्व

पान की खेती भारत के प्रमुख कृषि उद्योगों में से एक है। कुछ क्षेत्रों में इसका महत्व खाद्य और अन्य नकदी फसलों के बराबर है। पान की खेती दक्षिण और पूर्वोत्तर भारत के नम और वर्षा वाले क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से की जाती है, जबकि उत्तर भारत के गर्म और शुष्क क्षेत्रों में संरक्षित खेती (बरेजा) के रूप में इसकी खेती होती है। यह फसल न केवल आर्थिक लाभ देती है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से भी महत्वपूर्ण है। बिहार के मगही पान, जो अपनी कोमल बनावट, सौम्य स्वाद, और औषधीय गुणों के लिए जाना जाता है, ने GI टैग प्राप्त कर राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाई है।

पान की खेती के लिए जलवायु और मिट्टी

पान एक ऊष्णकटिबंधीय पौधा है, जो नम, ठंडे, और छायादार वातावरण में अच्छी तरह बढ़ता है। इसके लिए आदर्श तापमान 20–30 डिग्री सेल्सियस और उच्च आर्द्रता की आवश्यकता होती है।

मिट्टी की आवश्यकताएं

पान की खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में की जा सकती है, लेकिन लाल मिट्टी के साथ पडुवा मिट्टी इसके लिए सर्वोत्तम होती है। खेत में कम से कम 15 सेंटी मीटर मोटी तालाब की काली मिट्टी की परत डालने से पैदावार बढ़ती है। मिट्टी का ढाल ऐसा होना चाहिए कि बारिश का पानी आसानी से निकल जाए, क्योंकि जलभराव से रोगों का खतरा बढ़ता है।

जमीन की तैयारी

1. **पहली जुताई:** मई–जून में मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करें ताकि कीड़े और खरपतवार नष्ट हो जाएं।
2. **दूसरी जुताई:** अगस्त में देशी हल से जुताई करें और खेत को खुला छोड़ दें।
3. **अंतिम जुताई:** बरेजा बनाने से 25 दिन पहले फावड़े से गुड़ाई और देशी हल से जुताई कर मिट्टी को भुरभुरी करें।
4. **जमीन की सफाई:** बरेजा बनाने के बाद कूड़ा–करकट हटाएं, चूना डस्ट डालें, और 0.25% बोर्डो मिश्रण का छिड़काव करें।
5. **जैविक खाद:** 30–40 किलोग्राम सड़ी गोबर की खाद में 1 किलोग्राम ट्राइकोडर्मा विरडी पाउडर मिलाकर एक सप्ताह तक नम रखें। इसे अंतिम जुताई के बाद खेत में मिलाएं।

पान की प्रमुख किस्में

भारत में पान की 100 से अधिक किस्में पाई जाती हैं, जिनमें बनारसी, सौंफिया, बंगला, देशावरी, कपूरी, मीठा, और सांची प्रमुख हैं। विभिन्न क्षेत्रों में एक ही किस्म को अलग–अलग नामों से जाना जाता है। उदाहरण के लिए, देशी, कलकतिया, रामटेक, और मघई प्रजातियां भी लोकप्रिय हैं। बिहार का मगही पान, जो मगध क्षेत्र (औरंगाबाद, गया, नवादा, और नालंदा जिले) में उगाया जाता है, अपनी गैर–रेशेदार बनावट, मिठास, और कोमलता के लिए प्रसिद्ध है। मगही पान को 28 मार्च 2018 को GI टैग (पंजीकरण संख्या 554) प्राप्त हुआ, जो इसे बिहार की सांस्कृतिक और कृषि विरासत का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बनाता है। इसकी पत्तियों में फ्लेवोनॉइड्स और फेनोलिक यौगिकों की उच्च मात्रा होती है, जो इसे औषधीय गुण प्रदान करते हैं।

किस्म किस्म की विशेषत

बनारसी पान	हल्का हरा रंग, मोटी पत्ती, तीखा स्वाद, चबाने में मजा आता है, लंबी पत्ती।
मालवी पान	गहरा हरा रंग, पतली पत्ती, हल्का तीखा स्वाद, चबाने में मजा आता है, छोटी पत्ती।
देसी पान	हल्का हरा रंग, मोटी पत्ती, तीखा स्वाद, चबाने में मजा आता है, मध्यम पत्ती।
मगही पान	हल्का हरा रंग, पतली पत्ती, हल्का तीखा स्वाद, चबाने में मजा आता है, छोटी पत्ती।
कपूरी पान	हल्का हरा रंग, पतली पत्ती, मीठा स्वाद, चबाने में मजा आता है, छोटी पत्ती।
सांची पान	हल्का हरा रंग, मोटी पत्ती, हल्का तीखा स्वाद, चबाने में मजा आता है, मध्यम पत्ती।

ISSN: 3049-2211

छोटी पान	हल्का हरा रंग, पतली पत्ती, मीठा स्वाद, चबाने में मजा आता है, बहुत छोटी पत्ती।
पूर्णी पान	हल्का हरा रंग, मोटी पत्ती, तीखा स्वाद, चबाने में मजा आता है, मध्यम पत्ती।
बंगाली पान	हल्का हरा रंग, पतली पत्ती, हल्का तीखा स्वाद, चबाने में मजा आता है, मध्यम पत्ती
जगन्नाथी पान	हल्का हरा रंग, मोटी पत्ती, तीखा स्वाद, चबाने में मजा आता है, लंबी पत्ती

बनारसी पान

मालवी पान

देसी पान

मगही पान

कपूरी पान

सांची पान

छोटी पान

पूर्णी पान

बंगाली पान

जगन्नाथी पान

बरेजा (पान की बाड़ी) की तैयारी

पान की खेती बरेजा नामक संरक्षित संरचना में की जाती है, जो छायादार और नम वातावरण प्रदान करती है। बरेजा बनाने के लिए बांस, घास, या अन्य सामग्री का उपयोग किया जाता है।

बेल का चयन और रोपाई

- **बेल का चयनः** एक साल पुरानी स्वस्थ बेल की कतरन चुनें। कतरन 90 सेंटीमीटर लंबी और बीच से काटी जानी चाहिए।
- **बेल की सफाईः** रोपाई से पहले बेल को 0.25% बोर्डो मिश्रण या ब्लाइटॉक्स के घोल में 15–20 मिनट तक डुबोएं।
- **रोपाईः** सुबह 11 बजे तक या शाम 3 बजे के बाद 4–5 सेंटीमीटर गहराई पर 10–15 सेंटीमीटर की दूरी पर बेल लगाएं। दो लाइनों के बीच 50–55 सेंटीमीटर की दूरी रखें।

सिंचाई

पान की खेती में नियमित सिंचाई आवश्यक है।

- **प्रारंभिक सिंचाईः** रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई करें।
- **नियमित सिंचाईः** गर्मियों में हर 3–4 दिन, सर्दियों में 7–8 दिन, और बरसात में आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करें।

बेल को सहारा देना

पौधे 15 सेंटीमीटर ऊंचे होने पर बांस की पतली फट्टियों और रस्सी से बांधें। इससे बेल की वृद्धि और पैदावार बढ़ती है।

निराई–गुड़ाई

खरपतवार दिखने पर नियमित रूप से निराई–गुड़ाई करें।

खाद और उर्वरक

- **जैविक खादः** नीम, सरसों, या तिल की खली का उपयोग करें। तिल की खली 50–60 क्विंटल और नीम की खली 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर डालें।
- **रासायनिक उर्वरकः** नाइट्रोजन (150 किलोग्राम), फॉस्फोरस (100 किलोग्राम), और पोटाश (100 किलोग्राम) प्रति हेक्टेयर डालें।

कीट और रोग प्रबंधन

पान की फसल को विभिन्न कीटों और रोगों से बचाना जरूरी है।

प्रमुख कीट

1. **सफेद मक्खीः** पत्तियों का रस चूसती है। रोकथाम के लिए 0.5% डायमेथोएट या 5% नीम तेल का छिड़काव करें।
2. **सूक्ष्म लाल मकड़ीः** पत्तियों पर लाल धब्बे बनाती है। 30–40 ग्राम सल्फेक्स को 10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
3. **शल्क कीटः** पत्तियां सिकुड़ जाती हैं। 0.5% डायमेथोएट का 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

प्रमुख रोग

1. **पदगलन (फुट रॉट)ः** फफूंद के कारण तना सड़ता है। रोकथाम के लिए अच्छा जल निकास सुनिश्चित करें और ट्राइकोडर्मा पाउडर का उपयोग करें।
2. **सूखी जड़ सड़नः** राइजोप्टोनिया फफूंद के कारण। 0.3% कार्बेंडाजिम या 0.2% मैंकोजेब का छिड़काव करें।
3. **एंथ्रेक्नोजः** पत्तियों पर गहरे भूरे धब्बे। 0.3% मैंकोजेब का 10–15 दिनों पर छिड़काव करें।
4. **तना कैंसरः** तने पर भूरे धब्बे। 150 ग्राम प्लांटो बाइसिन और 150 ग्राम कॉपर सल्फेट का घोल बनाकर छिड़काव करें।
5. **जड़ों में गांठेंः** सूत्रकृमि के कारण। नीम की खली (15–20 किलोग्राम प्रति 100 मीटर) का उपयोग करें।

पान के औषधीय गुण

पान के पत्ते आयुर्वेद में महत्वपूर्ण हैं। सुश्रुत संहिता के अनुसारः

- गले की खराश और खांसी को कम करता है।
- मुंह की दुर्गंध दूर करता है।
- पाचन शक्ति बढ़ाता है।
- कुचली पत्तियों का लेप घावों को ठीक करता है।
- काली मिर्च या अजवायन के साथ उपयोग से अजीर्ण और कफ में राहत मिलती है।

मगही पान में फ्लेवोनॉइड्स और फेनोलिक यौगिकों की उच्च मात्रा इसे विशेष रूप से औषधीय बनाती है, जो एंटीऑक्सीडेंट और सूजन–रोधी गुण प्रदान करते हैं।

पान का रासायनिक संरचना

पान में फॉस्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, कॉपर, जिंक, शर्करा, और क्विनोलिक यौगिक पाए जाते हैं। इसके उड़नशील तेल पत्तियों को फफूंद से बचाते हैं और स्वाद प्रदान करते हैं। विभिन्न किस्मों में यूजीनॉल और एथेनॉल की मात्रा अलग–अलग होती है, जो तीखेपन और मिठास के लिए जिम्मेदार हैं। मगही पान में एथेनॉल की अच्छी मात्रा होती है, जिसके कारण यह मीठे पान के रूप में लोकप्रिय है।

पान की खेती का आर्थिक महत्व

पान की खेती किसानों के लिए एक लाभकारी व्यवसाय है। महोबा और बांदा जैसे क्षेत्रों में पान की मंडियां अच्छा मुनाफा देती हैं। बिहार में मगही पान की खेती भी आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण है, लेकिन GI टैग के बावजूद इसके उत्पादकों को बाजार पहुंच और मौसम की अनिश्चितताओं जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। महोबा में 1980–81 में स्थापित पान प्रयोग और प्रशिक्षण केंद्र किसानों को तकनीकी सहायता प्रदान करता है, और बिहार में भी समान प्रशिक्षण केंद्र स्थापित करने की आवश्यकता है ताकि मगही पान की खेती को बढ़ावा मिले।

निष्कर्ष

पान की खेती न केवल एक आर्थिक गतिविधि है, बल्कि भारत की सांस्कृतिक और औषधीय विरासत का हिस्सा भी है। वैज्ञानिक तकनीकों, उचित जलवायु प्रबंधन, और कीट–रोग नियंत्रण के साथ किसान इस फसल से अच्छा मुनाफा कमा सकते हैं। उत्तर प्रदेश, विशेष रूप से महोबा, और बिहार का मगही पान इस क्षेत्र में अग्रणी हैं। मगही पान का GI टैग इसकी विशिष्टता को दर्शाता है, लेकिन इसके पूर्ण आर्थिक लाभ के लिए बाजार विकास और सरकारी सहायता आवश्यक है। सरकार और कृषि संस्थानों के सहयोग से पान की खेती को और अधिक लाभकारी बनाया जा सकता है, जिससे किसानों की आय बढ़ेगी और यह पारंपरिक फसल भविष्य में भी फलती–फूलती रहेगी।

***

कृषक मंच

ISSN: 3049-2211

चरोटा (*Cassia tora*): नैनोप्रौद्योगिकी में उभरता एक जैविक संसाधन

दीपक कश्यप एवं प्रज्ञा महोबे

पीएच.डी. शोधार्थी (पादप कार्यिकी, कृषि जैव रसायन, औषधीय एवं सुगंधित पौधे विभाग)

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़।

चरोटा (*Cassia tora*), एक पारंपरिक औषधीय पौधा है, जो भारत सहित कई एशियाई देशों में जंगली रूप से पाया जाता है। हाल के वर्षों में इस पौधे का उपयोग हरित नैनोप्रौद्योगिकी (Green Nanotechnology) में बढ़ता जा रहा है, जहाँ इसके पत्तों और बीजों के अर्क से धातु आधारित नैनोकणों का निर्माण किया जा रहा है। ये नैनोकण रोगाणु–नाशक, एंटीऑक्सीडेंट और जैविक कृषि उत्पादों के निर्माण में सहायक हैं। इस लेख में चरोटा के नैनोप्रौद्योगिकीय उपयोग, संश्लेषण विधि, लाभ, एवं भविष्य की संभावनाओं पर प्रकाश डाला गया है।

परिचय

भारत के गांव–गलियों में आसानी से मिलने वाला चरोटा (*Cassia tora/Senna tora*) – यह नाम सुनकर शायद ही कोई इसे एक क्रांतिकारी दवा समझे। लेकिन आज यही पौधा नैनो टेक्नोलॉजी की बदौलत दुनिया भर के वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित कर रहा है। यह कहानी है उस अद्भुत मेल की, जब हजारों साल पुराना पारंपरिक ज्ञान मिला 21वीं सदी के अत्याधुनिक विज्ञान से। भारत में यह पौधा प्राकृतिक रूप से मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा, और राजस्थान में पाया जाता है।

साथ ही यह चीन, म्यांमार, इंडोनेशिया और अफ्रीका में भी उगाया जाता है। चरोटा एक वार्षिक झाड़ीनुमा पौधा है जो 30 से 90 सेंटीमीटर तक लंबा होता है। इसकी पत्तियां संयुक्त पिच्छाकार होती हैं और इनमें विशिष्ट गंध होती है। पौधे में छोटे पीले फूल आते हैं जो पत्तियों के कांख में जोड़ों में लगते हैं। इसकी फलियां लंबी, चपटी और मुड़ी हुई होती हैं, जिनमें भूरे या काले रंग के बीज होते हैं।

पोषण एवं स्वास्थ्य लाभ

पत्तियाँः प्रोटीन (15%), विटामिन C (80–85 मि.ग्रा./100 ग्राम), कैल्शियम, लोहा में समृद्ध। इसे कई क्षेत्रों में साग के रूप में खाया जाता है (चक्रमर्द का साग)। प्रतिरक्षा बढ़ाने, पाचन सुधारने, एवं एंटीऑक्सीडेंट गुणों के लिए जाना जाता है।

बीज– एंथ्राक्विनोन जैसे यौगिकों से भरपूर– एमोडिन, क्रायसॉफेनॉल आदि।

उपयोग– कब्ज निवारण (Natural Laxative), मधुमेह नियंत्रण, जिगर एवं आँखों की सेहत हेतु आयुर्वेदिक प्रयोग।

खेती और उत्पादन

बुआई का समय– जून–जुलाई (मानसून के साथ)।

मिट्टी– सभी प्रकार की मिट्टी में उग सकता है।

बीज– प्रति हेक्टेयर 8–10 किलो बीज।

देखभाल

सिंचाई– कम पानी की आवश्यकता।

खाद– जैविक खाद का उपयोग।

रोग–कीट– प्राकृतिक रूप से प्रतिरोधी।

फसल

समय– 90–120 दिन में तैयार।

उत्पादन– 8–12 क्विंटल प्रति हेक्टेयर।

भंडारण– सूखी जगह में रखें।

पारंपरिक उपयोग– एक समृद्ध विरासत

हमारे पूर्वजों ने सदियों से चरोटा का उपयोग विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं के समाधान के लिए किया है–

मुख्य पारंपरिक उपयोगः कब्ज और पेट की गैस का प्रभावी इलाज, त्वचा संबंधी समस्याएं – खुजली, दाद, एक्जिमा, आंखों के संक्रमण और समस्याओं में राहत, घाव भरने की प्रक्रिया में तेजी, बुखार कम करने में सहायक, मधुमेह नियंत्रण में प्राकृतिक सहारा, परंतु पारंपरिक तरीकों की अपनी सीमाएं थीं – कम बायो–अवेलेबिलिटी (केवल 15–20%), धीमा प्रभाव, बड़ी मात्रा की आवश्यकता, और कड़वे स्वाद की समस्या।

नैनो क्रांति

नैनो टेक्नोलॉजी ने इन सभी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया है। जब हम किसी पदार्थ को नैनो स्तर (1–100 नैनोमीटर) पर ले जाते हैं, तो इसके गुण पूरी तरह बदल जाते हैं। समझिए नैनो स्केल कोः

1 नैनोमीटर = 1 मीटर का अरबवां हिस्सा, एक बाल की मोटाई = लगभग 80,000 नैनोमीटर, इस छोटे स्तर पर सरफेस एरिया 1000 गुना बढ़ जाता है।

चरोटा का नैनो रूपांतरणः पांच क्रांतिकारी तकनीकें

1. फाइटोसोमल जेल तकनीक– यह सबसे बड़ी सफलता है। पारंपरिक चरोटा पेस्ट की तुलना में नैनो फाइटोसोमल जेलरू त्वचा में प्रवेशरू 15–20% से बढ़कर 65–70%, असर का समयरू 4–6 घंटे से घटकर 30–45 मिनट, एंटीफंगल गतिविधिरू 250% अधिक प्रभावी।

दुष्प्रभावः नगण्य।

वैज्ञानिक परिणामः स्टैफिलोकोकस ऑरियस के खिलाफ 85% प्रभावशीलता, एक्जिमा के मरीजों में 72 घंटे में 60% सुधार, 100 मरीजों के क्लिनिकल ट्रायल में 92% सफलता दर।

2. हरित नैनो पार्टिकल्स संश्लेषण– चरोटा की पत्तियों का उपयोग करके पर्यावरण–अनुकूल नैनो पार्टिकल्स बनाए जा सकते हैंः कोई हानिकारक रसायन नहीं, 90% कम लागत, प्राकृतिक रूप से विघटित होने वाले।

3. नैनो–एमल्शन फॉर्मूलेशन– त्वचा की समस्याओं के लिए विशेष रूप से तैयार, एक्जिमा में सुधार 45% से बढ़कर 78%, फंगल इन्फेक्शन में 50% से बढ़कर 85%

4. नैनो–कैप्सूल्सः कब्ज का अंत– कंट्रोल्ड रिलीज़ सिस्टम के साथ, पारंपरिक चूर्ण 5–10 ग्राम प्रतिदिन की आवश्यकता, नैनो–कैप्सूल केवल 500mg प्रतिदिन, 150 मरीजों के अध्ययन में 95% को 24 घंटे में राहत।

5. मधुमेह नियंत्रण फॉर्मूला– 50 टाइप–2 डायबिटिक मरीजों पर प्रारंभिक परिणाम, फास्टिंग ग्लूकोज में 45% कमी, इंसुलिन की आवश्यकता में 30% कमी।

कृषि उपयोग

गोंद उत्पादन (Cassia Gum): कासिया तोड़ा के बीज से गैलैक्टोमैनन (Galactomannan) गोंद निकाली जाती है। यह टेक्सटाइल, आइसक्रीम, पशु चारा, फार्मा इंडस्ट्री में उपयोगी है।

कृषि में लाभः यह पौधा मृदा क्षरण रोकने, हरी खाद, एवं मधुमक्खियों हेतु पराग स्रोत के रूप में प्रयोग होता है। जैविक खेती के लिए उपयुक्त पौधा।

हरित नैनो–संश्लेषण (Green Synthesis): चरोटा के पत्तों और बीजों के जल अर्क का प्रयोग कर चाँदी (Ag), स्वर्ण (Au), तथा मैंगनीज़ ऑक्साइड जैसे नैनोकणों को प्राकृतिक रूप से संश्लेषित किया जा सकता है। यह प्रक्रिया पारंपरिक रासायनिक विधियों की तुलना में पर्यावरण–अनुकूल, सस्ती एवं विष–रहित है।

चाँदी नैनोकण (Silver Nanoparticles/AgNPs): चरोटा की पत्तियों या बीजों के अर्क का उपयोग कर चाँदी आयनों को कम करके अत्यंत छोटे आकार (40–70 नैनोमीटर) के नैनोकण बनाए गए हैं। ये नैनोकण एंटीबैक्टीरियल (antibacterial), एंटीऑक्सीडेंट और एंटीफंगल गुणों से भरपूर होते हैं।

स्वस्थ्य देखभाल उत्पादों में उपयोगः चरोटा आधारित नैनो जेल (Phytosomal gel) तैयार किए गए हैं जो त्वचा पर लगाने पर घाव भरने, जलन कम करने और संक्रमण रोकने में सहायक हैं।

कृषि में संभावनाएँः चरोटा से प्राप्त नैनोकणों को जैविक कीटनाशक और नैनोखाद के रूप में भी उपयोग करने की दिशा में शोध हो रहा है।

चुनौतियां और समाधान

मुख्य चुनौतियांः लैब से इंडस्ट्रियल स्केल का ट्रांजिशन, रेगुलेटरी गाइडलाइन्स का अभाव, उपभोक्ता जागरूकता की कमी।

समाधान की दिशाः सरकार–उद्योग साझेदारी, नैनो मेडिसिन पॉलिसी का विकास, उपभोक्ता शिक्षा कार्यक्रम।

भविष्य की तकनीकेंः AI और मशीन लर्निंग का एकीकरण, स्मार्ट ड्रग डिलीवरी सिस्टम, पर्सनलाइज़्ड मेडिसिन एप्रोच स सामाजिक प्रभावरू समुदाय के लिए लाभ ग्रामीण विकासरू किसानों की आय में वृद्धि, महिला सशक्तिकरण के अवसर, स्थानीय बुनियादी ढांचे का विकास स स्वास्थ्य सेवा में सुधाररू सस्ती और प्रभावी दवाएं, ग्रामीण क्षेत्रों में बेहतर पहुंच, पारंपरिक ज्ञान का रक्षण।

हरित उत्पादनः कार्बन फुटप्रिंट में 60% कमी, 80% कम अपशिष्ट उत्पादन, प्राकृतिक रूप से विघटित होने वाले उत्पाद।

निष्कर्ष

चरोटा और नैनो टेक्नोलॉजी का यह मेल केवल एक वैज्ञानिक उपलब्धि नहीं है। यह भारत की समृद्ध पारंपरिक चिकित्सा पद्धति को आधुनिक विज्ञान के साथ जोड़ने का एक अनुकरणीय उदाहरण है। यह दिखाता है कि कैसे हमारे पूर्वजों का ज्ञान आज भी प्रासंगिक है और कैसे आधुनिक तकनीक इसे और भी प्रभावी बना सकती है। यह यात्रा अभी शुरुआत है। जैसे–जैसे हम आगे बढ़ेंगे, नई चुनौतियां और अवसर दोनों आएंगे। महत्वपूर्ण बात यह है कि हम इस विकास को जिम्मेदारी के साथ करें, पर्यावरण का ख्याल रखें, और यह सुनिश्चित करें कि इसका लाभ समाज के हर वर्ग तक पहुंचे। चरोटा की इस नैनो क्रांति में हम सभी की भूमिका है। आइए मिलकर उस भविष्य का निर्माण करें जहां परंपरा और आधुनिकता का मेल एक स्वस्थ और समृद्ध कल का वादा करता है।

***

ISSN: 3049-2211

जलवायु परिवर्तन के दौर में टमाटर और प्याज की फसलें: बढ़ते दाम और घटती पैदावार

सतवीर सिंह
पी.एच.डी. शोधार्थी (सब्जी विज्ञान)
बागवानी महाविद्यालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन, हिमाचल प्रदेश।

परिचय

जलवायु परिवर्तन आज वैश्विक स्तर पर एक गंभीर चुनौती बन चुका है, जिसका प्रभाव कृषि क्षेत्र पर गहरा पड़ रहा है। भारत जैसे कृषि–प्रधान देश में, जहाँ टमाटर और प्याज जैसी सब्जियाँ रोजमर्रा की खाद्य आवश्यकताओं का आधार हैं, जलवायु परिवर्तन के कारण इन फसलों की पैदावार में कमी और बाजार में दामों में उछाल देखने को मिल रहा है। बढ़ता तापमान, अनियमित वर्षा, सूखा, बाढ़, और कीटों–रोगों का बढ़ता प्रकोप टमाटर और प्याज की खेती को प्रभावित कर रहा है। इसका परिणाम न केवल किसानों की आजीविका पर पड़ रहा है, बल्कि उपभोक्ताओं को भी उच्च कीमतों का सामना करना पड़ रहा है। यह लेख जलवायु परिवर्तन के टमाटर और प्याज की फसलों पर प्रभाव, इसके कारण बढ़ते दाम, घटती पैदावार, और समाधान के उपायों पर विस्तृत चर्चा करता है।

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

जलवायु परिवर्तन कई कारकों के माध्यम से टमाटर और प्याज की फसलों को प्रभावित कर रहा है–

1) तापमान में वृद्धिः उच्च तापमान टमाटर और प्याज की वृद्धि और विकास को बाधित करता है। टमाटर के लिए 35 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान फूल गिरने और फल सेट में कमी का कारण बनता है, जबकि प्याज की बल्ब वृद्धि 25–30 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान पर प्रभावित होती है।

2) अनियमित वर्षा और सूखाः अनियमित वर्षा और सूखे की स्थिति टमाटर और प्याज की फसलों में जल की कमी का कारण बनती है, जिससे उपज में कमी आती है।

3) बाढ़ और जलभरावः अत्यधिक वर्षा और जलभराव टमाटर की जड़ों में सड़न और प्याज के बल्ब में रॉट (bulb rot) की समस्या को बढ़ाते हैं।

4) कीट और रोगों का प्रकोपः जलवायु परिवर्तन ने कीटों जैसे टमाटर पिनवर्म (*Tuta absoluta*) और थ्रिप्स (*Thrips tabaci*) के साथ–साथ रोगों जैसे ब्लॉसम एंड रॉट (टमाटर) और पर्पल ब्लॉच (प्याज) को बढ़ावा दिया है।

5) मिट्टी की उर्वरता में कमीः जलवायु परिवर्तन के कारण मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी हो रही है, जो इन फसलों की गुणवत्ता और उपज को प्रभावित करती है।

टमाटर और प्याज की फसलों पर प्रभावरू विशिष्ट उदाहरण

1. टमाटर

टमाटर एक गर्म मौसम की फसल है, लेकिन अत्यधिक गर्मी और अनियमित जल उपलब्धता इसके उत्पादन को प्रभावित करती है। उच्च तापमान के कारण फूल गिरने और फल सेट में कमी की समस्या आम है। इसके अलावा, टमाटर पिनवर्म और लीफ कर्ल वायरस जैसे कीट और रोग गर्म और शुष्क जलवायु में तेजी से फैलते हैं। बाढ़ और जलभराव से ब्लॉसम एंड रॉट और जड़ सड़न की समस्या बढ़ती है, जिससे फल की गुणवत्ता और उपज कम हो जाती है।

उदाहरणः 2023 में महाराष्ट्र और कर्नाटक में अत्यधिक गर्मी और सूखे के कारण टमाटर की पैदावार में 20–30% की कमी दर्ज की गई। परिणामस्वरूप, टमाटर के दाम ₹100–150 प्रति किलो तक पहुँच गए, जिसने उपभोक्ताओं पर भारी आर्थिक बोझ डाला।

प्रभावः कम पैदावार और बढ़ते कीट–रोगों के कारण टमाटर की आपूर्ति में कमी आई, जिससे बाजार में कीमतें बढ़ीं। छोटे और मध्यम किसानों को लागत वसूली में कठिनाई हुई।

2. प्याज

प्याज की खेती के लिए मध्यम तापमान और नियमित जल आपूर्ति आवश्यक है। जलवायु परिवर्तन के कारण गर्मी और सूखे की स्थिति में प्याज के बल्ब छोटे रह जाते हैं, और जलभराव से बल्ब सड़न की समस्या बढ़ती है। थ्रिप्स और पर्पल ब्लॉच जैसे कीट और रोग गर्म और आर्द्र जलवायु में अधिक सक्रिय हो रहे हैं। प्याज की भंडारण क्षमता भी प्रभावित हो रही है, क्योंकि उच्च तापमान और आर्द्रता बल्बों को जल्दी खराब कर देती है।

उदाहरणः 2024 में नासिक, महाराष्ट्र, जो भारत का प्रमुख प्याज उत्पादन केंद्र है, में अनियमित मॉनसून और गर्मी के कारण प्याज की पैदावार में 25% की कमी आई। इससे प्याज की कीमतें ₹80–120 प्रति किलो तक बढ़ गईं, जिसने उपभोक्ताओं और किसानों दोनों को प्रभावित किया।

प्रभावः कम पैदावार और भंडारण में नुकसान के कारण प्याज की आपूर्ति बाधित हुई, जिससे बाजार में कीमतें अनियंत्रित हो गईं।

बढ़ते दामों के कारण

1) कम उत्पादनः जलवायु परिवर्तन के कारण टमाटर और प्याज की पैदावार में कमी आई है, जिससे आपूर्ति और माँग में असंतुलन पैदा हुआ है। कम आपूर्ति के कारण कीमतें बढ़ रही हैं।

2) उत्पादन लागत में वृद्धिः कीट–रोग प्रबंधन, सिंचाई, और उर्वरकों की बढ़ती लागत ने किसानों के खर्च को बढ़ाया है, जिसका प्रभाव बाजार कीमतों पर पड़ता है।

3) भंडारण और परिवहन की समस्याएँः गर्मी और आर्द्रता के कारण टमाटर और प्याज का भंडारण कठिन हो गया है, जिससे परिवहन के दौरान नुकसान बढ़ता है। यह कमी कीमतों में वृद्धि का कारण बनती है।

4) बाजार अस्थिरताः जलवायु परिवर्तन के कारण अनिश्चित उत्पादन ने बाजार में अस्थिरता पैदा की है, जिससे कीमतों में उतार–चढ़ाव बढ़ गया है।

5) निर्यात और माँगः भारत में प्याज और टमाटर की माँग न केवल घरेलू स्तर पर, बल्कि अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी है। कम उत्पादन के कारण निर्यात में कमी और घरेलू कीमतों में वृद्धि हो रही है।

समाधान और प्रबंधन के उपाय

जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने और टमाटर व प्याज की फसलों की पैदावार को स्थिर करने के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाए जा सकते हैं–

1. जलवायु–सहनशील किस्मों का उपयोग

टमाटर– पुसा हाइब्रिड–4, अर्का रक्षक, और अर्का मेघाली जैसी गर्मी और सूखा सहनशील किस्में उच्च तापमान और कम जल उपलब्धता में बेहतर प्रदर्शन करती हैं। अर्का रक्षक लीफ कर्ल वायरस और ब्लॉसम एंड रॉट के प्रति भी प्रतिरोधी है।

प्याज– अग्रिफाउंड डार्क रेड, अर्का कल्याण, और पुसा रिद्धि जैसी किस्में सूखा और जलभराव सहनशील हैं, साथ ही थ्रिप्स और पर्पल ब्लॉच के प्रति प्रतिरोधी हैं।

2. एकीकृत कीट और रोग प्रबंधन (IPM)

टमाटर– टमाटर पिनवर्म के लिए फेरोमोन ट्रैप और *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस* (Bt) का उपयोग प्रभावी है। नैनो–सिल्वर और नीम–आधारित कीटनाशक रोगों को नियंत्रित करते हैं।

प्याज– थ्रिप्स के लिए इमिडाक्लोप्रिड और नीम तेल का पर्णीय छिड़काव, साथ ही जैविक नियंत्रण एजेंट जैसे ट्राइकोग्रामा का उपयोग सहायक है।

3. जल प्रबंधन

ड्रिप सिंचाई और मल्चिंग का उपयोग टमाटर और प्याज की फसलों में जल की कमी को कम करता है। यह तकनीक सूखे की स्थिति में फसलों को जीवित रखने में मदद करती है। जलभराव की स्थिति में उचित जल निकासी व्यवस्था और ऊँची क्यारियों (raised beds) का उपयोग जड़ सड़न को रोकता है।

4. संरक्षित खेती

पॉलीहाउस और शेड नेट हाउस का उपयोग टमाटर की खेती में गर्मी और कीटों से सुरक्षा प्रदान करता है। प्याज के लिए नियंत्रित भंडारण सुविधाएँ (cold storage) बल्ब सड़न को कम करती हैं।

उदाहरण– कर्नाटक में पॉलीहाउस में टमाटर की खेती ने गर्मी और कीटों के प्रभाव को 30% तक कम किया है।

5. नैनो उर्वरक का उपयोग

नैनो–यूरिया और नैनो–जस्ता का पर्णीय छिड़काव टमाटर और प्याज की फसलों में पोषक तत्वों की कमी को पूरा करता है, जिससे उपज और गुणवत्ता में सुधार होता है।

उदाहरण– नैनो–यूरिया का उपयोग टमाटर की उपज को 15–20% तक बढ़ा सकता है, जबकि प्याज में बल्ब के आकार और भंडारण क्षमता को बेहतर बनाता है।

6. किसान प्रशिक्षण और नीतिगत समर्थन

किसानों को जलवायु–स्मार्ट खेती, नई किस्मों, और कीट प्रबंधन तकनीकों के बारे में प्रशिक्षण देना आवश्यक है। सरकार द्वारा सब्सिडी, बीमा योजनाएँ, और बेहतर भंडारण सुविधाएँ प्रदान करना टमाटर और प्याज की आपूर्ति को स्थिर करने में मदद करेगा।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन ने टमाटर और प्याज की फसलों की पैदावार को कम कर दिया है, जिसके परिणामस्वरूप बाजार में इनके दाम बढ़ रहे हैं। उच्च तापमान, अनियमित वर्षा, और कीट–रोगों का बढ़ता प्रकोप इन फसलों के लिए प्रमुख चुनौतियाँ हैं। हालांकि, जलवायु–सहनशील किस्में, एकीकृत कीट प्रबंधन, जल प्रबंधन, और नैनो उर्वरकों जैसी आधुनिक तकनीकों के उपयोग से इन चुनौतियों का सामना किया जा सकता है। भारत में टमाटर और प्याज न केवल खाद्य सुरक्षा का आधार हैं, बल्कि लाखों किसानों की आजीविका का स्रोत भी हैं। इसलिए, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के लिए वैज्ञानिक अनुसंधान, किसान जागरूकता, और नीतिगत समर्थन के सामूहिक प्रयास आवश्यक हैं। इन उपायों के माध्यम से न केवल पैदावार को बढ़ाया जा सकता है, बल्कि बाजार में कीमतों को स्थिर रखकर उपभोक्ताओं और किसानों दोनों को लाभ पहुँचाया जा सकता है।

**

टिकाऊ कृषि में जैविक खेती की भूमिका

दीपक कुमार मिश्रा (शोध छात्र)
डॉ. अभिषेक तिवारी (सहायक प्राध्यापक)
मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान, छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)।

जैविक खेती एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है जैविक खेती स्वस्थ मिट्टी को बढ़ावा देकर, पर्यावरणीय प्रभाव को कम करके और विविध पारिस्थितिकी तंत्रों का समर्थन करके टिकाऊ कृषि प्राप्त करना। यह सिंथेटिक रसायनों पर निर्भरता को कम करता है, मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करता है और जैव विविधता को बढ़ाता है, जिससे एक अधिक लचीली और पर्यावरण की दृष्टि से स्वस्थ कृषि प्रणाली में योगदान मिलता है। जैविक खेती एक प्रकार की खेती है जो पर्यावरण के प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखती है और उसमें सुधार करती है। जैविक खेती कृषि पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर लचीलापन बढ़ाकर जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों का सामना करने की क्षमता बढ़ाती है।

यह शक्तिशाली और पर्यावरण की दृष्टि से सुदृढ़ कृषि प्रणालियों का निर्माण करता है, जो तापमान में उतार–चढ़ाव और सूखे के प्रति लचीली होती हैं और मृदा क्षरण से बचाती हैं । जैविक खेती टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल प्रबंधन, संरक्षण, प्रथाओं और पुनरुद्धार गतिविधियों को भी बढ़ावा देती है।

आधुनिक कृषि की तुलना में जैविक खेती के लिए वित्तीय आवश्यकता कम है। इसके अलावा, जैविक खेती किसानों और समुदायों को जलवायु परिवर्तन के संवेदनशील प्रभाव को अपनाने में मदद करती है, इसके अलावा, जैविक खेती सफल अनुकूलन रणनीतियों के लिए पहचानी गई कई आवश्यकताओं को पूरा करती है।

जैविक खेती कृषि और खाद्य उत्पादन में समकालीन मुद्दों द्वारा सामना की जाने वाली अधिकांश समस्याओं का समाधान प्रदान करती है। स्वास्थ्य, पारिस्थितिकी, निष्पक्षता और देखभाल के सिद्धांत वे जड़ें हैं जिनसे जैविक कृषि बढ़ती और विकसित होती है जैविक उत्पाद पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं और बड़े पैमाने पर कीटनाशकों से मुक्त होते हैं अवशेष और योजक।

2022 में सबसे बड़े जैविक कृषि भूमि क्षेत्र वाले दस देश

ऑस्ट्रेलिया– 53.02 मि.हे., भारत– 4.73 मि.हे., अर्जेंटीना– 4.06 मि. हे., चीन– 2.90 मि.हे., फ्रांस– 2.88 मि.हे., उरुग्वे– 2.74 मि.हे., स्पेन– 2.68 मि.हे., इटली– 2.35 मि.हे., यूएसए– 2.06 मि.हे., जर्मनी– 1.86 मि.हे.।

जैविक खेती आधारित कृषि के मुख्य स्तंभ

- एक बंद प्रणाली के अंतर्गत काम करना तथा यथासंभव स्थानीय संसाधनों का उपयोग करना।
- मिट्टी की दीर्घकालिक उर्वरता बनाए रखना।
- कृषि तकनीकों से उत्पन्न होने वाले सभी प्रकार के प्रदूषण से बचना।
- पर्याप्त गुणवत्ता और उच्च पोषण गुणवत्ता वाले खाद्य पदार्थों का उत्पादन करना।

जैविक खेती के सिद्धांत

जैविक खेती के चार बुनियादी सिद्धांत–

(1) स्वास्थ्य के सिद्धांत

जैविक खेती को मिट्टी, पौधे, पशु, मानव और ग्रह के स्वास्थ्य को एक और अदृश्य रूप में बनाए रखना और बढ़ाना चाहिए।

(2) पारिस्थितिकी का सिद्धांत

जीवित पारिस्थितिकी प्रणालियों और चक्रों के आधार पर, उनके साथ काम करें और उन्हें बनाए रखने में मदद करें।

(3) सिद्धांत का निष्पक्षता

- ऐसे रिश्ते बनाएं जो निष्पक्षता सुनिश्चित करें।
- सामान्य वातावरण और जीवन के अवसर।

(4) सिद्धांत का देखभाल

- जैविक खेती का प्रबंधन सावधानी पूर्वक और उचित तरीके से किया जाना चाहिए।
- स्वास्थ्य और भलाई की रक्षा के लिए जिम्मेदार तरीके।
- वर्तमान एवं भावी पीढ़ी और पर्यावरण।

जैविक खेती का महत्व

- उच्च पोषण मूल्य एवं विष मुक्त।
- कीटों और रोगों के प्रति प्रतिरोधी।
- कम निवेश लागत, प्रदूषण मुक्त एवं उच्च उर्वर मिट्टी।

जैविक उत्पादों बिक्री

वैश्विक जैविक बाज़ार ने 2023 में निरंतर वृद्धि का अनुभव किया, जो 136 तक पहुंच गया। 4 अरब यूरो। संयुक्त राज्य अमेरिका सबसे बड़ा बाजार बना रहा, उसके बाद जर्मनी और चीन का स्थान है। भारत में वैश्विक स्तर पर सबसे अधिक जैविक उत्पादक हैं। आई.एफ.ओ.ए.एम.– जैविक अंतरराष्ट्रीय रिपोर्ट के अनुसार 2023 में वैश्विक जैविक बाजार 136.5 बिलियन यूरो तक पहुंच जाएगा।

स्टेटिस्टा

इसके अलावा, जैविक खाद्य की वैश्विक बिक्री 2023 में लगभग 136.3 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुंच गई है।

निष्कर्ष

यदि हम दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य लें तो धरती पर जीवन को बनाए रखने के लिए जैविक निर्माण आवश्यक है। वर्तमान परिदृश्य को देखते हुए जब हमारे कृषि क्षेत्र में मिट्टी रासायनिक उर्वरक के अत्यधिक उपयोग के कारण खराब हो रही है, जैविक खेती सभी प्राकृतिक पोषक तत्वों के साथ धरती माँ को रिचार्ज करने का सबसे अच्छा तरीका हो सकता है ताकि मानव आबादी अधिक स्वस्थ जीवन जी सके।■

ISSN: 3049-2211

एरोबिक चावल की खेती: फायदे और नुकसान

सतभिषा नायक, पी.एच.डी. शोधार्थी, सस्य विज्ञान विभाग
प्रज्ञा महोबे एवं उज्ज्वल कुमार, पी.एच.डी. शोधार्थी, पादप कार्यकी, कृषि जैव रसायन, औषधीय एवं सुगंधित पौधे विभाग
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़।

परिचय

एरोबिक चावल की खेती सतत और पर्यावरण हितैषी तकनीक है जिसमें चावल की फसल को सूखे या पानी से भीगे हुए बीजों का उपयोग करके बिना कीचड़ वाले, बिना बाढ़ वाले खेतों में सीधे लगाया जाता है। एरोबिक चावल उगाने की मानक विधि सीधे बोने के माध्यम से होती है, ठीक वैसे ही जैसे हम गेहूं या मक्का जैसी अन्य अनाज वाली फसलों के लिए अपनाते हैं। यह श्रम और पानी के उपयोग को कम करने के लिए सबसे प्रभावी तरीकों में से एक है। निचली भूमि की किस्मों के उच्च उपज वाले गुणों के साथ उच्च भूमि वाली किस्मों के सूखा प्रतिरोधी गुणों को मिलाकर, एरोबिक चावल की खेती की जाती है।

छत्तीसगढ़ मे एरोबिक चावल की खेती

धान की खेती छत्तीसगढ़ के लिए केवल आजीविका का साधन नहीं, बल्कि यहाँ की संस्कृति और अर्थव्यवस्था का आधार है। **धान का कटोरा** कहलाने वाला यह राज्य देश के चावल उत्पादन में अहम भूमिका निभाता है। लेकिन जलवायु परिवर्तन के कारण अनियमित मानसून, सूखा और बाढ़ जैसी समस्याएँ धान की खेती को प्रभावित कर रही हैं। पारंपरिक जलमग्न खेती से न सिर्फ पानी की बर्बादी होती है, बल्कि यह मीथेन गैस का उत्सर्जन भी बढ़ाती है, जो ग्लोबल वार्मिंग का एक बड़ा कारण है। ऐसे में **एरोबिक चावल की खेती** एक बेहतर विकल्प के रूप में उभर रही है। यह तकनीक कम पानी का उपयोग करती है और मीथेन उत्सर्जन को कम करने में मदद करती है। छत्तीसगढ़ के कुछ क्षेत्र, जैसे बस्तर और सरगुजा, जहाँ सिंचाई सीमित और वर्षा अनिश्चित है, वहाँ एरोबिक चावल की खेती भविष्य के लिए संभावनाएँ लेकर आती है।

एरोबिक चावल की खेती प्रक्रिया

1. खेत की तैयारी एवं मिट्टी का चयन

- एरोबिक धान उत्पादन के लिए हल्की दोमट से लेकर मध्यम बनावट वाली मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है।
- खेत में जल निकासी की उचित व्यवस्था होनी चाहिए ताकि जलभराव न हो।
- जुताई के बाद भूमि को समतल कर लिया जाता है ताकि नमी समान रूप से बनी रहे।

2. बीज एवं रोपण विधि

- इस विधि में विशेष रूप से विकसित सूखा–सहनशील धान किस्मों का उपयोग किया जाता है, जो कम पानी में भी बेहतर उपज देने में सक्षम होती हैं।
- बीजों को सीधे खेत में बुवाई की जाती है (Direct Seeded Rice & DSR), जिससे नर्सरी और रोपाई की आवश्यकता नहीं होती है।
- बीज दर सामान्यतः 40–50 किग्रा/हेक्टेयर होती है, और बुवाई के बाद पर्याप्त नमी बनाए रखना आवश्यक होता है।

3. जल प्रबंधन

- एरोबिक चावल उत्पादन के लिए जल की बचत प्राथमिक कारक होता है।
- इस विधि में मिट्टी की नमी को बनाए रखने के लिए पूरक सिंचाई दी जाती है, लेकिन खेत को कभी जलमग्न नहीं किया जाता।
- पारंपरिक धान खेती की तुलना में एरोबिक धान 50ः तक सिंचाई जल की बचत करता है।

4. पोषक तत्व प्रबंधन

- चावल की अच्छी वृद्धि के लिए समुचित उर्वरक प्रबंधन आवश्यक है।
- संतुलित नाइट्रोजन (N), फॉस्फोरस (P), पोटाश (K) और सूक्ष्म पोषक तत्व युक्त उर्वरकों का उपयोग किया जाता है।
- जैविक खादों (हरी खाद, कंपोस्ट) और सूक्ष्म जीव उर्वरकों (माइक्रोबियल फर्टिलाइजर) को अपनाकर मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखा जा सकता है।

5. फसल सुरक्षा प्रबंधन

- एरोबिक धान में खरपतवार की समस्या अधिक हो सकती है, इसलिए खरपतवार नियंत्रण के लिए यांत्रिक विधियों, मल्चिंग और शाकनाशियों का उचित उपयोग आवश्यक होता है।
- फसल को रोग और कीटों से बचाने के लिए जैविक नियंत्रण और समेकित कीट प्रबंधन (IPM) तकनीक अपनाई जाती है।

6. उपज एवं उत्पादकता

- एरोबिक चावल की किस्में सूखा–सहिष्णु होती हैं और कम जल उपलब्धता में भी 4–6 टन/हेक्टेयर तक की उपज प्राप्त की जा सकती है।
- उचित जल और पोषण प्रबंधन के साथ, इसकी उत्पादकता पारंपरिक सिंचित धान उत्पादन के करीब पहुँच सकती है।

एरोबिक चावल की खेती के प्रमुख अवधि

ISSN: 3049-2211

एरोबिक चावल की खेती का लक्ष्यित क्षेत्र

एरोबिक चावल की खेती उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है जहाँ पारंपरिक जलभराव वाली खेती संभव नहीं है या जहाँ पानी की उपलब्धता सीमित है। यह तकनीक विशेष रूप से उन क्षेत्रों में फायदेमंद है जहाँ मिट्टी की नमी अनिश्चित होती है या सिंचाई सुविधाएँ अपर्याप्त हैं।

1. अनुकूल ऊपरी भूमि

- समतल या हल्के ढलान वाले क्षेत्र जहाँ पर्याप्त वर्षा होती है (अतिरिक्त सिंचाई के साथ या बिना)।
- मिट्टी में नमी बनाए रखने की क्षमता होती है, और किसानों को उर्वरक जैसी आवश्यक आपूर्ति उपलब्ध होती है।
- छत्तीसगढ़ मेंरू बस्तर, सरगुजा, कोरिया और कांकेर जिलों की ऊपरी भूमि व पठारी क्षेत्र, जहाँ मिट्टी की जलधारण क्षमता कम है और पानी जल्दी रिस जाता है।

2. ऊपरी ढलान या छत वाले क्षेत्र

- वर्षा–आधारित लहरदार या निचले इलाके, जहाँ मिट्टी दानेदार (मोटे बनावट वाली) और अच्छी जल निकासी वाली होती है।
- ऐसे क्षेत्र जहाँ खेत में पानी का जमाव नहीं होता।

3. सीमित सिंचाई वाली निचली भूमि

- ऐसे सिंचित क्षेत्र जहाँ पानी की कमी के कारण लंबे समय तक जलभराव संभव नहीं है।
- छत्तीसगढ़ में बिलासपुर, जांजगीर–चांपा और मुंगेली जिलों के कुछ हिस्से, जहाँ सिंचाई सुविधाएँ मौजूद हैं लेकिन पूरे फसल चक्र में पानी की उपलब्धता सुनिश्चित नहीं हो पाती।

4. अनिश्चित मिट्टी की नमी वाले क्षेत्र

- भारत के विभिन्न राज्यों जैसे तमिलनाडु, झारखंड, छत्तीसगढ़, बिहार, ओडिशा, कर्नाटक और पूर्वी उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्सों में, जहाँ मिट्टी की नमी अनियमित रूप से वितरित होती है।
- छत्तीसगढ़ में दुर्ग, राजनांदगाँव और महासमुंद जिलों के मध्यम ऊँचाई वाले वर्षा–आधारित क्षेत्र, जहाँ सिंचाई सुविधाएँ सीमित हैं और किसान मानसून पर निर्भर रहते हैं।

एरोबिक चावल की खेती के लिए उपयुक्त चावल की किस्में

एरोबिक चावल की खेती के लिए उपयुक्त किस्मों का चयन महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि इन किस्मों को कम पानी में अच्छा उत्पादन देने और सूखा सहनशीलता बनाए रखने के लिए विकसित

किया गया है। भारत में विभिन्न शोध संस्थानों द्वारा कुछ विशेष चावल की किस्में विकसित की गई हैं, जो अलग–अलग राज्यों और जलवायु परिस्थितियों के अनुसार उपयुक्त पाई गई हैं।

केंद्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, कटक द्वारा विकसित किस्में

किस्म का नाम	अनुकूल राज्य	फसल अवधि (दिन)	पौधे की ऊँचाई (सेमी)
सीआर धान 200/पियारी (IET 21214)	ओडिशा	120–125	95–100 (अर्ध–बौना)
सीआर धान 201 (IET 21924)	छत्तीसगढ़, बिहार	110–115	100 (अर्ध–बौना)
सीआर धान 202 (IET 21917)	ओडिशा, झारखंड	115	100 (अर्ध–बौना)
सीआर धान 204 (IET 21692)	झारखंड, तमिलनाडु	110	100 (अर्ध–बौना)

एरोबिक चावल की खेती के फायदे और नुकसान

फायदे	नुकसान
जल संरक्षण– पारंपरिक विधि की तुलना में 50% तक पानी की बचत होती है।	**अधिक खरपतवार नियंत्रण लागत–** जलभराव न होने के कारण खरपतवार तेजी से बढ़ते हैं, जिससे नियंत्रण खर्च बढ़ता है।
कम श्रम लागत– रोपाई और बार–बार सिंचाई की जरूरत नहीं होती, जिससे 50% तक श्रम की बचत होती है।	**मिट्टी की अनुकूलता सीमित–** गहरी, उच्च पीएच वाली मिट्टियाँ एरोबिक चावल के लिए उपयुक्त नहीं होतीं।
कम रोग एवं कीट संक्रमण– स्थिर पानी न होने के कारण जलजनित बीमारियाँ और कीट संक्रमण कम होते हैं।	**नेमाटोड और पोषक तत्वों की समस्या–** लौह (Fe) और जस्ता (Zn) की कमी हो सकती है, और रूट–नॉट नेमाटोड संक्रमण बढ़ सकता है।
उर्वरक उपयोग दक्षता अधिक– नाइट्रोजन और अन्य पोषक तत्वों का बेहतर अवशोषण होता है।	**अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में कठिनाई–** अधिक बारिश से पानी नियंत्रण मुश्किल हो सकता है, जिससे फसल प्रभावित हो सकती है।
पर्यावरण अनुकूल– जलभराव के अभाव में मीथेन गैस उत्सर्जन कम होता है, जिससे ग्रीनहाउस प्रभाव घटता है।	**सभी धान किस्में उपयुक्त नहीं–** केवल विशेष रूप से विकसित एरोबिक किस्में ही सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं।
उच्च उपज क्षमता– उपयुक्त प्रबंधन से पारंपरिक धान जितनी उपज प्राप्त हो सकती है।	**फसल स्टैंड और उपज की अस्थिरता–** फसल का असमान स्टैंड, आवास (lodging), और बीज भरने की समस्याएँ हो सकती हैं।

निष्कर्ष

एरोबिक चावल की खेती जल संरक्षण, कम श्रम लागत, और पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ावा देने वाला एक प्रभावी विकल्प है। यह मीथेन उत्सर्जन को कम कर जलवायु परिवर्तन से निपटने में मदद करता है। हालाँकि, खरपतवार प्रबंधन और पोषक संतुलन जैसी चुनौतियाँ हैं, जिन्हें उचित तकनीकों से हल किया जा सकता है। छत्तीसगढ़ जैसे क्षेत्रों में, जहाँ पानी की कमी और असमान वर्षा होती है, यह पद्धति सतत और लाभदायक कृषि का एक मजबूत विकल्प बन सकती है।

***

ISSN: 3049-2211

तेंदू फल: मध्य भारत का स्वर्णिम खजाना

प्रज्ञा महोबे एवं उज्ज्वल कुमार
पी.एच.डी. शोधार्थी
पादप कार्यिकी, कृषि जैव रसायन, औषधीय एवं सुगंधित पौधे विभाग,
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ।

परिचय

मध्य भारत के घने जंगलों में छिपा एक अनमोल रत्न है– तेंदू फल। यह छोटा, गोल, और रसीला फल न केवल स्वाद में अनूठा है, बल्कि अपने पोषण मूल्य, औषधीय गुणों, और सांस्कृतिक महत्व के लिए भी जाना जाता है। तेंदू फल, जिसे वैज्ञानिक रूप से *Diospyros melanoxylon* के नाम से जाना जाता है, मध्य भारत के आदिवासी समुदायों के लिए जीवन का एक अभिन्न हिस्सा रहा है। यह फल न केवल खाद्य स्रोत के रूप में महत्वपूर्ण है, बल्कि यह स्थानीय अर्थव्यवस्था, पारंपरिक चिकित्सा, और पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। इस लेख में हम तेंदू फल के विभिन्न पहलुओं, इसके इतिहास, उपयोग, और मध्य भारत के लिए इसके महत्व पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

तेंदू फल का परिचय और भौगोलिक वितरण

तेंदू का पेड़ (*Diospyros melanoxylon*) एक मध्यम आकार का पर्णपाती वृक्ष है, जो मुख्य रूप से भारत, श्रीलंका, और दक्षिण–पूर्व एशिया के कुछ हिस्सों में पाया जाता है। भारत में, यह मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, ओडिशा, झारखंड, और महाराष्ट्र के जंगलों में प्रचुर मात्रा में उगता है। तेंदू का पेड़ शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में पनपता है, और इसकी अनुकूलन क्षमता इसे आदिवासी क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण संसाधन बनाती है।

तेंदू फल गोल, छोटे आकार का होता है, और कच्चा होने पर हरा और पकने पर पीला–नारंगी या लाल रंग का हो जाता है। इसका स्वाद मीठा–खट्टा होता है, जो इसे स्थानीय लोगों के बीच लोकप्रिय बनाता है। तेंदू के पेड़ की पत्तियाँ भी महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि इनका उपयोग बीड़ी बनाने में किया जाता है, जो भारत में एक प्रमुख उद्योग है।

पोषण और औषधीय गुण

तेंदू फल पोषक तत्वों का एक समृद्ध स्रोत है। इसमें विटामिन सी, आयरन, कैल्शियम, और एंटीऑक्सीडेंट्स प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसके कुछ प्रमुख पोषण और औषधीय गुण निम्नलिखित हैं:

1. **विटामिन सी का स्रोत:** तेंदू फल में विटामिन सी की उच्च मात्रा होती है, जो रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में मदद करता है। यह सर्दी, खांसी, आदि से बचाव में सहायक है।
2. **एंटीऑक्सीडेंट्स:** तेंदू में मौजूद एंटीऑक्सीडेंट्स शरीर को फ्री रेडिकल्स से होने वाले नुकसान से बचाते हैं और उम्र बढ़ने की प्रक्रिया को धीमा करते हैं।
3. **पाचन में सहायक:** तेंदू फल में मौजूद फाइबर पाचन तंत्र को स्वस्थ रखता है और कब्ज जैसी समस्याओं को दूर करने में मदद करता है।
4. **रक्ताल्पता में लाभकारी:** इसमें आयरन की मात्रा होने के कारण यह रक्ताल्पता (एनीमिया) से पीड़ित लोगों के लिए लाभकारी है।

5. **त्वचा और बालों के लिए फायदेमंद:** तेंदू फल का उपयोग पारंपरिक रूप से त्वचा और बालों की समस्याओं के उपचार में किया जाता है। इसके बीजों का तेल त्वचा को नमी प्रदान करता है और घावों को ठीक करने में मदद करता है।

आदिवासी समुदायों में, तेंदू फल का उपयोग विभिन्न रोगों जैसे बुखार, दस्त, और त्वचा रोगों के इलाज में किया जाता है। इसके बीज और छाल का उपयोग भी आयुर्वेदिक और स्थानीय चिकित्सा पद्धतियों में प्रचलित है।

तेंदू पत्ते के वृक्ष की पत्तियाँ, बीज, छाल, लकड़ी और अन्य भाग अनेक प्रकार के उपयोगों के लिए प्रसिद्ध हैं। इसकी पत्तियाँ बीड़ी उद्योग का मुख्य कच्चा माल हैं और यही कारण है कि छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश में इसे **हरा सोना** कहा जाता है। प्रतिवर्ष लाखों टन पत्तियों का संग्रहण और व्यापार होता है, जिससे हजारों लोगों को रोजगार मिलता है। इसके पत्तों को पशु आहार के रूप में भी प्रयोग किया जाता है, क्योंकि इनमें उच्च गुणवत्ता का चारा, विटामिन और खनिज पाए जाते हैं, जो पशुओं के पाचन के लिए लाभकारी होते हैं।

तेंदू के बीजों में औषधीय गुण होते हैं, विशेषकर एंटीसेप्टिक गुण, जिससे यह त्वचा की क्रीमों और आयुर्वेदिक दवाओं में प्रयुक्त होते हैं। इन्हें आँखों की रोशनी सुधारने के लिए भी उपयोग में लाया जाता है। लकड़ी और छाल के भी कई उपयोग हैं। लकड़ी से हल्के फर्नीचर और कृषि उपकरण बनाए जाते हैं,

जबकि इसे ईंधन के रूप में भी जलाया जाता है। छाल से तैयार किया गया काढ़ा मुंह संबंधी रोगों में राहत देता है और पेड़ से निकलने वाला गोंद (लासा) भी नेत्र रोगों में लाभकारी माना गया है।

सांस्कृतिक और सामाजिक महत्व

मध्य भारत के आदिवासी समुदायों, जैसे गोंड, बैगा, कोरकू, और भील, के लिए तेंदू फल केवल एक खाद्य पदार्थ नहीं है, बल्कि यह उनकी संस्कृति और परंपराओं का हिस्सा है। तेंदू फल को विभिन्न धार्मिक और सामाजिक आयोजनों में उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, कुछ समुदायों में तेंदू फल को प्रसाद के रूप में चढ़ाया जाता है।

तेंदू फल का मौसम (मार्च से जून) आदिवासियों के लिए उत्सव का समय होता है। इस दौरान परिवार और समुदाय के लोग जंगल में एकत्रित होकर तेंदू फल इकट्ठा करते हैं, जो न केवल उनकी आजीविका का स्रोत है, बल्कि सामुदायिक एकता को भी बढ़ाता है। इस प्रक्रिया में बच्चे, महिलाएँ, और बुजुर्ग सभी भाग लेते हैं, जिससे सामाजिक बंधन मजबूत होते हैं।

आर्थिक महत्व और आजीविका

तेंदू फल और इसके पेड़ की पत्तियों ने मध्य भारत के ग्रामीण और आदिवासी समुदायों की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। तेंदू की पत्तियों का उपयोग बीड़ी उद्योग में किया जाता है, जो लाखों लोगों को रोजगार प्रदान करता है। तेंदू फल भी स्थानीय बाजारों में बिकता है और छोटे–मोटे व्यापार का आधार बनता है।

हालांकि, तेंदू फल का व्यावसायिक उपयोग अभी भी सीमित है। इसे ज्यादातर स्थानीय स्तर पर ही बेचा जाता है, लेकिन इसके प्रसंस्करण और पैकेजिंग की संभावनाएँ अपार हैं। तेंदू फल से जैम, जेली, जूस, और अन्य खाद्य उत्पाद बनाए जा सकते हैं, जो न केवल स्थानीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा दे सकते हैं, बल्कि राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में भी अपनी जगह बना सकते हैं।

पर्यावरणीय महत्व

तेंदू का पेड़ पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह शुष्क क्षेत्रों में मिट्टी के कटाव को रोकने में मदद करता है और अपनी छाया से जैव–विविधता को संरक्षित करता है। तेंदू के पेड़ की जड़ें मिट्टी को बांधे रखती हैं, जिससे भूमि का क्षरण कम होता है। इसके अतिरिक्त, यह पेड़ स्थानीय वन्यजीवों, जैसे पक्षियों और कीटों, के लिए आवास और भोजन प्रदान करता है।

तेंदू का पेड़ कम पानी में भी उग सकता है, जिसके कारण यह जलवायु परिवर्तन के दौर में एक महत्वपूर्ण प्रजाति के रूप में उभर रहा है। इसे वनरोपण और हरित परियोजनाओं में शामिल किया जा सकता है ताकि मरुस्थलीकरण को रोका जा सके।

चुनौतियाँ और भविष्य की संभावनाएँ

तेंदू फल और इसके पेड़ से संबंधित कई चुनौतियाँ हैं। जंगलों की कटाई, अवैध लकड़ी व्यापार, और जलवायु परिवर्तन के कारण तेंदू के पेड़ों की संख्या में कमी आ रही है। इसके अलावा, तेंदू फल के व्यावसायिक उपयोग को बढ़ावा देने के लिए उचित बुनियादी ढाँचे और जागरूकता की कमी है।

हालांकि, तेंदू फल की संभावनाएँ असीमित हैं। सरकार और गैर–सरकारी संगठनों द्वारा तेंदू फल के प्रसंस्करण और विपणन को बढ़ावा देने के लिए कदम उठाए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए:

- **प्रसंस्करण इकाइयाँ:** तेंदू फल से बने उत्पादों के लिए छोटी–छोटी प्रसंस्करण इकाइयाँ स्थापित की जा सकती हैं।
- **जागरूकता अभियान:** तेंदू फल के पोषण और औषधीय गुणों के बारे में जागरूकता फैलाई जा सकती है।
- **निर्यात की संभावना:** जैविक और प्राकृतिक उत्पादों की बढ़ती माँग को देखते हुए, तेंदू फल को अंतरराष्ट्रीय बाजारों में निर्यात किया जा सकता है।
- **संरक्षण प्रयास:** तेंदू के पेड़ों के संरक्षण के लिए वनरोपण और संरक्षित क्षेत्रों की स्थापना को बढ़ावा दिया जा सकता है।

निष्कर्ष

तेंदू फल मध्य भारत का एक अनमोल खजाना है, जो न केवल पोषण और औषधीय गुणों से भरपूर है, बल्कि सांस्कृतिक, आर्थिक, और पर्यावरणीय महत्व भी रखता है। यह आदिवासी समुदायों के लिए आजीविका का एक महत्वपूर्ण स्रोत है और उनकी परंपराओं का अभिन्न हिस्सा है। तेंदू फल और इसके पेड़ को संरक्षित करने और इसके व्यावसायिक उपयोग को बढ़ावा देने के लिए सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता है। यदि उचित कदम उठाए जाएँ, तो तेंदू फल न केवल मध्य भारत की अर्थव्यवस्था को मजबूत कर सकता है, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी एक अनूठे और मूल्यवान उत्पाद के रूप में उभर सकता है। तेंदू फल वास्तव में मध्य भारत का स्वर्णिम खजाना है, जिसे सहेजने और सम्मान देने की आवश्यकता है। यह न केवल प्रकृति का उपहार है, बल्कि हमारी सांस्कृतिक धरोहर और भविष्य की संभावनाओं का प्रतीक भी है।

ISSN: 3049-2211

छत्तीसगढ़ की भाजी संस्कृतिः पारंपरिक सब्जियों की स्वास्थ्य और सांस्कृतिक धरोहर

उज्ज्वल कुमार– पी.एच.डी. शोधार्थी, पादप कार्यकी, कृषि जैव रसायन, औषधीय एवं सुगंधित पौधे विभाग
सतभिषा नायक– पी.एच.डी. शोधार्थी, सस्य विज्ञान विभाग
प्रगति– पी.एच.डी. शोधार्थी, उद्यानिकी विभाग
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर छत्तीसगढ़।

परिचय

छत्तीसगढ़, अपनी समृद्ध सांस्कृतिक और कृषि विरासत के लिए जाना जाता है, जिसे **धान का कटोरा** कहा जाता है। इस राज्य की **भाजी संस्कृति** इसकी पहचान का एक जीवंत हिस्सा है, जिसमें 36 पारंपरिक पत्तेदार साग (भाजियाँ) शामिल हैं। ये भाजियाँ, जैसे अमारी, मुनगा, चौलाई, और चेंच, न केवल छत्तीसगढ़ के ग्रामीण और आदिवासी समुदायों के भोजन का आधार हैं, बल्कि स्वास्थ्य, आयुर्वेद, और सांस्कृतिक परंपराओं का भी अभिन्न हिस्सा हैं। ये स्थानीय जलवायु और मिट्टी के अनुकूल होने के कारण टिकाऊ खेती का प्रतीक हैं। यह लेख छत्तीसगढ़ की 36 पारंपरिक भाजियों, उनके पोषण और औषधीय गुणों, सांस्कृतिक महत्व, और आधुनिक संदर्भ में उनकी प्रासंगिकता पर विस्तृत चर्चा करता है, साथ ही इन भाजियों को एक तालिका में उनके लक्षणों और क्रमांक (1 से 36) के साथ प्रस्तुत करता है।

छत्तीसगढ़ की 36 पारंपरिक भाजियाँः विशेषताएँ और गुण

छत्तीसगढ़ की 36 भाजियाँ स्थानीय जंगलों, खेतों, और घरेलू बगीचों में प्राकृतिक रूप से उगती हैं। ये पत्तेदार साग पोषण से भरपूर हैं और आयुर्वेद में औषधीय महत्व रखते हैं। नीचे दी गई तालिका में इन भाजियों के क्रमांक, नाम, वैज्ञानिक नाम (जहाँ उपलब्ध), पोषण गुण, और औषधीय उपयोग को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया गया हैः

भाजी का नाम	वैज्ञानिक नाम	पोषण गुण	औषधीय उपयोग	स्वाद और उपयोग
अमारी भाजी	*Hibiscus sabdariffa*	विटामिन C, फाइबर, एंटीऑक्सिडेंट	पाचन, रक्त शुद्धिकरण, सूजन कम करना।	खट्टा स्वाद, सब्जी और चटनी में उपयोग।
चेंच भाजी	*Corchorus olitorius*	आयरन, कैल्शियम, विटामिन	एनीमिया, कुपोषण, हड्डी स्वास्थ्य।	हल्का कड़वा, साग और दाल में उपयोग।
तिवरा भाजी /लाकड़ी भाजी	*Lathyrus sativus*	एंटीऑक्सिडेंट, विटामिन C	जोड़ों का दर्द, सूजन कम करना।	हल्का स्वाद, साग और काढ़े में उपयोग।
चना भाजी	*Cicer arietinum*	प्रोटीन, फाइबर, आयरन	पाचन, हृदय स्वास्थ्य, एनीमिया।	हल्का स्वाद, साग और सब्जी में उपयोग।
लाल भाजी	*Amaranthus cruentus*	विटामिन A, C, आयरन	आँखों, त्वचा, और प्रतिरक्षा स्वास्थ्य।	हल्का मीठा, साग और सलाद में उपयोग।
खेड़ा/जरी भाजी	*Amaranthus dubius*	फाइबर, खनिज	पाचन, मूत्रवर्धक।	हल्का स्वाद, साग और औषधीय काढ़े में।
गोंदली/ प्याज भाजी	*Allium cepa*	विटामिन B, एंटीऑक्सिडेंट	रक्त शर्करा नियंत्रण, पाचन	कड़वा स्वाद, साग और औषधीय उपयोग।
बोहार भाजी	*Cordia dichotoma*	एंटीऑक्सिडेंट, विटामिन C	सूजन, त्वचा रोगों में राहत	हल्का कड़वा, साग और काढ़े में।
मस्केनी भाजी	*Merremia emarginata*	फाइबर, विटामिन A	पाचन, श्वसन स्वास्थ्य।	हल्का स्वाद, साग और सब्जी में।
पटवा भाजी	*Hibiscus cannbinus*	विटामिन K, फोलेट	रक्त के थक्के, हड्डी स्वास्थ्य	हल्का स्वाद, साग और चटनी में।
करेला भाजी	*Momordica charantia*	विटामिन C, आयरन, कैल्शियम, फाइबर, बीटा–कैरोटीन	मधुमेह नियंत्रण में उपयोगी, यकृत विकारों में लाभदायक, पाचन सुधारता है, कृमिनाशक।	तीव्र कड़वा स्वाद, सब्जी, जूस, अचार व औषधीय काढ़े में उपयोग होता है।
मेथी भाजी	*Trigonella foenum& graecum*	आयरन, कैल्शियम, विटामिन K, फाइबर, प्रोटीन	मधुमेह, कब्ज, रक्त शुद्धिकरण में सहायक।	हल्का कड़वा स्वाद, पराठा, सब्जी, दाल में उपयोग।

ISSN: 3049-2211

चनौरी भाजी	*Medicago denticulata*	विटामिन B, एंटीऑक्सिडेंट	लीवर स्वास्थ्य, पाचन।	कड़वा स्वाद, साग और काढ़े में।
तिनपनिया भाजी	*oÛalis corniculata*	विटामिन C,	मूत्रवर्धक गुण मूत्र पथ स्वास्थ्य, पाचन	हल्का स्वाद, साग और औषधीय उपयोग।
खोटनी भाजी	*Amaranthus hybridus*	प्रोटीन, आयरन, कैल्शियम, विटामिन A, C और K, फाइबर	रक्तशुद्धिकरण, त्वचा रोग, कब्ज, बवासीर, मूत्र विकार, रक्तचाप नियंत्रण।	स्वाद हल्का कसैला, पकने पर स्वादिष्ट साग, पराठा, पूरी, डलिया, राजगिरा लड्डू/चिवड़ा, व्रत में सेवन।
मुरई भाजी	*Raphanus sativus*	एंटीऑक्सिडेंट, खनिज	सूजन, जोड़ों का दर्द।	हल्का कड़वा, साग और काढ़े में।
चौलाई भाजी	*Amaranthus viridis*	विटामिन A, C, आयरन	कुपोषण, त्वचा, प्रतिरक्षा।	हल्का मीठा, साग और सलाद में।
करमता भाजी	*Ipomoea aquatica*	एंटीऑक्सिडेंट, फाइबर	रक्त शर्करा, पाचन।	कड़वा स्वाद, साग और औषधीय उपयोग।
कांदा भाजी	*Ipomoea batatas*	विटामिन C, एंटीऑक्सिडेंट	प्रतिरक्षा, हृदय स्वास्थ्य।	तीखा स्वाद, साग और चटनी में।
मखना भाजी	*Cucurbita maxima*	फाइबर, विटामिन A	पाचन, श्वसन स्वास्थ्य।	हल्का स्वाद, साग और सब्जी में।
सुनसुनिया भाजी	*Marsilea minut*	आयरन, फाइबर	एनीमिया, पाचन।	हल्का स्वाद, साग और दाल में।
गुमी भाजी	*eucas cephalotes spreng*	फाइबर, एंटीऑक्सीडेंट, खनिज	बुखार, खांसी, दस्त में लाभकारी।	स्वाद में कसैला, स्थानीय व्यंजनों में सब्जी की तरह प्रयोग।
बर्रे भाजी/कुसुम भाजी	*Carthemnus oÛycantha*	विटामिन B, एंटीऑक्सिडेंट	रक्त शर्करा, लीवर स्वास्थ्य।	कड़वा स्वाद, साग और काढ़े में।
कोलियारी भाजी	*Bauhinia purpurea*	विटामिन A, C, खनिज	लीवर टॉनिक, पाचन तंत्र सुधारक, सूजन कम करता है।	हल्का कसैला, परंपरागत सब्जी के रूप में प्रयोग।
लहसुवा भाजी	*Allium sativum*	एंटी–बैक्टीरियल, विटामिन C	प्रतिरक्षा, हृदय स्वास्थ्य।	तीखा स्वाद, साग और चटनी में।
सरसो भाजी	*Brassica juncea*	विटामिन C, एंटीऑक्सिडेंट	सूजन, सर्दी–जुकाम में राहत।	तीखा स्वाद, साग और अचार में।
मास्टर भाजी	*Talinum paniculatum*	आयरन, कैल्शियम, विटामिन C	खून की कमी, थकावट दूर करता है।	स्वाद में मुलायम, पालक जैसे प्रयोग किया जाता है
चरोटा भाजी	*Cassia tora*	आयरन, खनिज	एनीमिया, कुपोषण।	हल्का कड़वा, साग और औषधीय उपयोग।
चिरचिरा भाजी	*Achyranthes aspera*	मूत्रवर्धक, विटामिन C	मूत्र पथ, पाचन।	हल्का स्वाद, साग और काढ़े में।
पीपर भाजी	*Ficus religiosa*	फाइबर, एंटीऑक्सीडेंट, आयरन	कब्ज, मधुमेह, फेफड़ों के रोगों में लाभकारी।	हल्का कसैला, परंपरागत हर्बल औषधि में उपयोग होता है।
चांटी भाजी	*Polygonum plebeium R*	आयरन, विटामिन C, टैनिन्स	दस्त और बुखार में उपयोगी।	तीखा और कसैला, स्थान विशेष में सब्जी के रूप में उपयोग।
मुनगा भाजी	*Moringa oleifera*	विटामिन A, C, E, कैल्शियम	कुपोषण, हृदय, हड्डी स्वास्थ्य।	हल्का स्वाद, साग और सूप में
आलू भाजी	*Solanum tuberosum*	फाइबर, खनिज	पाचन, त्वचा स्वास्थ्य।	हल्का स्वाद, साग और सब्जी में।
बथुआ भाजी	*Chenopodium album*	विटामिन A, C, आयरन	आँखें, प्रतिरक्षा, एनीमिया।	हल्का स्वाद, साग और सलाद में।

कोचई भाजी	*Colocasia antiquarum*	कैल्शियम, आयरन, विटामिन A, फाइबर	पाचन में सहायक, एंटीऑक्सीडेंट।	पकाने पर स्वादिष्ट, पटोड़े, सब्जी व सूप में उपयोग।
नोनिया भाजी	*portulaca oleracea*	ओमेगा–3 फैटी एसिड, विटामिन A, C, E, मैग्नीशियम	सूजन, हृदय रोगों में सहायक।	खट्टा–नमकीन स्वाद, झोल, दाल व पराठा में प्रयोग।

स्वास्थ्य लाभ

छत्तीसगढ़ की पारंपरिक भाजियाँ पोषण और औषधीय गुणों का खजाना हैं। कुछ प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं–

1) **कुपोषण और एनीमिया से राहतः** मुनगा, चेंच, चौलाई, और चरोटा जैसी भाजियाँ आयरन, कैल्शियम, और विटामिन A और C से भरपूर हैं, जो कुपोषण और एनीमिया को कम करने में प्रभावी हैं। उदाहरण के लिए, मुनगा की पत्तियाँ गर्भवती महिलाओं में आयरन की कमी को पूरा करने के लिए उपयोगी हैं।

2) **पाचन स्वास्थ्यः** अमारी, गोंडाली, करमता, और चनौरी जैसी कड़वी भाजियाँ पाचन तंत्र को मजबूत करती हैं, कब्ज और अपच को कम करती हैं।

3) **प्रतिरक्षा और हृदय स्वास्थ्यः** सरसो, लहसुवा, और कांदा भाजी में एंटीऑक्सिडेंट और एंटी–बैक्टीरियल गुण होते हैं, जो प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करते हैं और हृदय रोगों के जोखिम को कम करते हैं।

4) **रक्त शर्करा नियंत्रणः** गोंडाली, गुड़रू, और बर्रे जैसी भाजियाँ मधुमेह रोगियों के लिए रक्त शर्करा को नियंत्रित करने में सहायक हैं।

5) **त्वचा और हड्डी स्वास्थ्यः** पालक, गोदाम, और पटवा में विटामिन K और कैल्शियम की उच्च मात्रा हड्डियों और त्वचा के लिए लाभकारी है।

सांस्कृतिक महत्व

छत्तीसगढ़ की भाजी संस्कृति केवल भोजन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक, और धार्मिक परंपराओं का अभिन्न हिस्सा है:

1) **पारंपरिक व्यंजनः** अमारी, चौलाई, और सरसों जैसी भाजियाँ **भाजी–भात**, **दाल–भाजी**, और **साग रोटी** जैसे पारंपरिक व्यंजनों का आधार हैं। ये व्यंजन छत्तीसगढ़ के हर घर में लोकप्रिय हैं।

2) **त्योहार और अनुष्ठानः** हरेली, तीज, और पोलो जैसे त्योहारों में मुनगा, लाल भाजी, और चेंच से बने व्यंजन बनाए जाते हैं, जो सामुदायिक एकता और सांस्कृतिक धरोहर का प्रतीक हैं।

3) **आयुर्वेदिक उपयोगः** चनौरी, गोंडाली, और चरोटा का उपयोग आयुर्वेदिक काढ़ों और घरेलू उपचारों में किया जाता है। उदाहरण के लिए, चनौरी का काढ़ा लीवर की समस्याओं के लिए उपयोगी है।

4) **आदिवासी परंपराएँः** गोंड, बैगा, और अन्य आदिवासी समुदाय खेण्डा, मुरै, और उरला जैसी जंगली भाजियों को अपने भोजन और औषधीय उपयोग में शामिल करते हैं, जो उनकी प्रकृति के साथ गहरे जुड़ाव को दर्शाता है।

5) **सामुदायिक बंधनः** स्थानीय हाट–बाजारों और मेलों में इन भाजियों की बिक्री सामुदायिक आदान–प्रदान और सांस्कृतिक संरक्षण को बढ़ावा देती है।

आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता

आधुनिक युग में, जब जलवायु परिवर्तन, शहरीकरण, और औद्योगिक खेती ने जैव–विविधता को खतरे में डाला है, छत्तीसगढ़ की पारंपरिक भाजियाँ कई कारणों से महत्वपूर्ण हैं–

- **जलवायु अनुकूलताः** ये भाजियाँ छत्तीसगढ़ की उष्णकटिबंधीय जलवायु, अनियमित मॉनसून, और कम उर्वरक मिट्टी के लिए अनुकूल हैं। उदाहरण के लिए, चेंच और तिनपनिया सूखा और गर्मी में भी अच्छा प्रदर्शन करती हैं।
- **पोषण और स्वास्थ्य जागरूकताः** मुनगा और चौलाई जैसे सुपरफूड्स की माँग शहरी और वैश्विक बाजारों में बढ़ रही है। मुनगा की पत्तियों का निर्यात छत्तीसगढ़ के लिए एक आर्थिक अवसर बन रहा है।
- **टिकाऊ खेतीः** ये भाजियाँ कम पानी, उर्वरक, और कीटनाशकों के साथ उगाई जा सकती हैं, जो छोटे और मध्यम किसानों के लिए किफायती हैं।
- **जैव–विविधता का संरक्षणः** इन भाजियों के देसी बीजों का उपयोग जैव–विविधता को बनाए रखता है और औद्योगिक खेती के प्रभावों को कम करता है।
- **आर्थिक अवसरः** स्थानीय बाजारों, जैविक उत्पादों, और निर्यात की माँग ने इन भाजियों को ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत बनाया है।

निष्कर्ष

छत्तीसगढ़ की 36 पारंपरिक भाजियाँ, जैसे मुनगा, चौलाई, अमारी, और चेंच, इस क्षेत्र की स्वास्थ्य, सांस्कृतिक, और पर्यावरणीय धरोहर का अभिन्न हिस्सा हैं। ये पत्तेदार साग पोषण से भरपूर होने के साथ–साथ स्थानीय जलवायु और मिट्टी के अनुकूल हैं, जो टिकाऊ खेती और जैव–विविधता के संरक्षण को बढ़ावा देती हैं। आयुर्वेद, स्थानीय व्यंजन, और आदिवासी परंपराओं में इनका गहरा महत्व है। हालांकि, जलवायु परिवर्तन, शहरीकरण, और जागरूकता की कमी इनके संरक्षण के लिए चुनौतियाँ हैं। देसी बीजों का संरक्षण, जैविक खेती, और बाजार विकास के माध्यम से इन भाजियों को पुनर्जनन दिया जा सकता है। छत्तीसगढ़ की भाजी संस्कृति न केवल खाद्य सुरक्षा और स्वास्थ्य को मजबूत करती है, बल्कि इस क्षेत्र की सांस्कृतिक पहचान को भी जीवित रखती है। सामूहिक प्रयासों और नीतिगत समर्थन के साथ, यह धरोहर आने वाली पीढ़ियों के लिए संरक्षित और समृद्ध की जा सकती है।

■■■

कृषक मंच
ISSN: 3049-2211

आधुनिक खेती में मृदा परीक्षण की भूमिका

विनीत कुमार यादव (शोध छात्र) एवं डॉ. अभिषेक तिवारी (सहायक आचार्य)
मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग
छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर।

आधुनिक खेती में मृदा की गुणवत्ता को संतुलित रखते हुए अधिक से अधिक उत्पादन लेना वर्तमान समय की मूलभूत आवश्यकता बन गई है। इसी आवश्यकता की पूर्ति हेतु हमारे देश के किसानों को समय–समय पर अपने खेत की मिट्टी की जांच कराते रहना रहना चाहिए। खेती में रासायनिक उर्वरकों के लगातार प्रयोग से हमारी मृदा पर बहुत बुरा असर हुआ है। मृदा परीक्षण किसनों को उनकी भूमि की स्थिति और आवश्यकताओं को समझने में मदद करता है। जिससे किसान सही प्रकार के उर्वरक और पोषक तत्वों का चुनाव कर सकते हैं।

मृदा परीक्षण

मृदा परीक्षण एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जिसमें मिट्टी के नमूने की जांच प्रयोगशाला में की जाती है। जिसके माध्यम से मृदा के विभिन्न गुणों जैसे मृदाचभ्, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम तथा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की गणना की जाती है। मृदा परीक्षण के माध्यम से किसानों को यह भी जानकारी हो जाती है कि उनकी मृदा में किस प्रकार के पोषक तत्वों की कमी या अधिकता है। मृदा जांच से यह पता चलता है कि खेत की जलधारण क्षमता कैसी है, और वहां की मिट्टी में अम्लता या क्षारीयता की कितनी अधिकता है, मृदा परीक्षण से राष्ट्रीय स्तर पर मृदा स्वास्थ्य के रखरखाव से कृषि उत्पादन में बल मिलेगा तथा कृषकों को व्यक्तिगत स्तर पर भी निम्नलिखित लाभ प्राप्त होंगे।

मृदा परीक्षण से लाभ

- ✓ मृदा परीक्षण से किसानों को यह पता चलता है, कि उनके खेतों में किन पोषक तत्वों की कितनी मात्रा उपलब्ध है और उनमें उगाई जाने वाली फसलों को पोषक तत्वों की कितनी मात्रा में आवश्यकता है, जिसके अनुसार उर्वरकों की सही मात्रा का निर्धारण करके अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।
- ✓ अगर खेतों में पोषक तत्वों की मात्रा पर्याप्त है या पोषक तत्वों की कमी काफी कम है, तो उस स्थिति में फसलों में देने वाले उर्वरकों की मात्रा को कम करके अनावश्यक खर्चे से बचत करके लाभ प्राप्त कर सकते हैं।
- ✓ मिट्टी जांच से प्राप्त परिणामों के अनुरूप किसान अपने खेतों में डाले गए उर्वरकों का पूर्ण उपयोग कर अधिक लाभ उठा सकते हैं। क्योंकि प्रायः देखा गया है, कि खेत में पोषक तत्व की कमी होने के कारण फसलों में प्रयोग किए गए अन्य उर्वरक अपना पूरा प्रभाव नहीं दिखा पाते हैं, तथा किसानों द्वारा उर्वरकों पर खर्च की गई लागत व्यर्थ चली जाती है।
- ✓ मृदा परीक्षण के बाद किसान आवश्यक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कर सकते हैं, और आवश्यकता से अधिक प्रयोग होने वाले रासायनिक उर्वरकों से जैविक गुणों में होने वाली बहुत सारी हानियों से अपने मृदा को बचा सकते हैं।
- ✓ मृदा परीक्षण से उपभोक्ता अपने खेत की मिट्टी में अम्लीय लावणी तथा क्षारीय लवणों की पहचान कर सकते हैं। जिसकी सहायता से खेतों में विभिन्न भूमि सुधार को जैसे– चूना, जिप्सम तथा पाइराइट इत्यादि का समुचित उपयोग कर और साथ ही ऐसी फसलों को उगाना जो अम्लीयता तथा क्षारीयता के प्रति सहनशील हो, जिससे किसान लाभ पा सकते हैं।

मृदा परीक्षण के लिए नमूना का चयन कैसे करें–

- ✓ मैदानी क्षेत्र वाले खेत से नमूना लेते समय खेत के चारों कोनो वाले जगह से दो से तीन मीटर जगह छोड़कर 10 से 15 स्थान से नमूने इकट्ठे करने चाहिए। इसके बाद इन सभी को मिलाकर एक नमूना बना लेते हैं। नमूने को छायादार जगह पर कागज या पॉलिथीन पर फैला लेते हैं, फैलाए गए नमूने के ऊपर एक क्रॉस निशान लगाकर चार बराबर भागों में बांट लेते हैं, और आमने–सामने के भाग को रखकर बाकी दो भागों को अलग कर देते हैं, लिए गए एक भाग की मिट्टी को एक बार फिर पॉलिथीन पर फैलाकर वही प्रक्रिया फिर दोहराते हुए इसमें एक हिस्सा रख लेते हैं, यही अलग की गई मृदा खेत के सही नमूने को पॉलिथीन या कपड़े की थैली में रखकर उसके बाहर लेबल लगा देना चाहिए। लेवल पर सभी जानकारी जैसे– कृषक का नाम, खेत की संख्या और फसल का नाम इत्यादि जानकारी को अच्छी प्रकार से लिखा जाना चाहिए। इन सभी जानकारी के साथ प्राप्त किया गया नमूना जांच के लिए प्रयोगशाला में भेज देना चाहिए।
- ✓ मृदा नमूना फावड़े, खुरपी की सहायता से एकत्र किए जा सकते हैं। खेतों से नमूना लेने के लिए प्रायः ऊपरी परत 6 इंच (15 सेंटीमीटर) तक की मृदा ली जानी चाहिए। मृदा से जड़, पुआल, कंकड़ पत्थर आदि को अलग कर देना चाहिए।
- ✓ मृदा नमूना निम्न जगहों जैसे– पेड़ –पौधों के पास, छायादार स्थान, दलदली जगह, घास –फूस, कूड़े के ढेर, जल भराव इत्यादि से नहीं लेना चाहिए।

मृदा परीक्षण कहां से करवाएं

आधुनिक समय में मृदा परीक्षण की व्यवस्थाएं लगभग सभी कृषि विज्ञान केंद्रों, जिलों, कृषि विश्वविद्यालयों तथा कृषि शोध संस्थानों में उपलब्ध हैं। जहां पर किसान अपने खेतों की मृदा की जांच कर सकते हैं। मृदा परीक्षण जांच विषय के बारे में अधिक जानकारी किसान भाई अपने विकासखंड के कृषि विकास अधिकारी से प्राप्त कर सकते हैं। किसानों को पिछले दो से तीन वर्षों के फसल चक्र के बारे में प्रयोगशाला विशेषज्ञों को अवश्य बताना चाहिए।

मृदा परीक्षण मानक

किसानों के सुझाव के लिए मृदा परीक्षण में निम्नलिखित चीजों का आकलन किया जाता है–

- मृदा pH
- विधुत चालकता (EC)
- कार्बनिक कार्बन
- मुख्य तथा सूक्ष्म पोषक तत्व

मृदा pH मान

मिट्टी की अम्लता एवं क्षारीयता को पता करने के लिए मृदा पी.एच. की गणना की जाती है। इसकी गणना के लिए दो

ISSN: 3049-2211

भाग आसुतजल तथा एक भाग मिट्टी का मिश्रण बनाकर अच्छी तरह से पी.एच. मीटर द्वारा पी.एच. मान ज्ञात किया जाता है। मृदा पी. एच. मान ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सामग्री की आवश्यकता होती है–

मृदा नमूना, आसुत जल, pH मीटर या pH पेपर, बीकर, कांच की छड़ी, फिल्टर पेपर (आवश्यकता होने पर)।

तालिका–1 मान के अनुसार मृदा की प्रकृति निर्धारित करें:

pH मान	प्रकृति
7 से कम	अम्लीय मृदा
7=	उदासीन
7 से अधिक	क्षारीय मृदा

विधुत चालकता (EC)

मृदा की लवणता का पता लगाने के लिए मृदा की विद्युत चालकता ज्ञात की जाती है। इसके लिए भी एक भाग मृदा व दो भाग आसुत जल का घोल बनाकर अच्छे प्रकार से EC मीटर द्वारा विद्युत चालकता ज्ञात की जाती है।

तालिका–2 विधुत चालकता के आधार पर मृदा का वर्गीकरण:

विधुत चालकता (1:2)	मृदा का प्रकार	प्रभाव
1 से कम	सामान्य मृदा	मृदा सुधार की आवश्यकता
1.0–2.0	सीमांत लवणता	मृदा सुधार आवश्यक, फल के लिए मिट्टी उपयुक्त
2.0 से अधिक	लवणीय मृदा	मृदा सुधार अति आवश्यक खास तौर पर भारी मृदा के लिए

कार्बनिक कार्बन

मृदा की उर्वरता ज्ञात करने के लिए मृदा में कार्बनिक कार्बन का आकलन किया जाता है। कार्बनिक कार्बन की गणना वाकले–ब्लैक विधि द्वारा किया जाता है। अच्छी उर्वरता वाली मिट्टी के लिए कार्बनिक कार्बन की मात्रा मिट्टी की गुणवत्ता संरचना और फसल उत्पादन की क्षमता को दर्शाती है।

तालिका–3 कार्बनिक कार्बन की आदर्श मात्रा वाकले–ब्लैक विधि से:

कार्बनिक कार्बन%	मिट्टी की गुणवत्ता
0.5% से कम	बहुत कम (कमजोर उर्वरता)
0.5–0.75	मध्यम (सुधार की आवश्यकता)
0.75–1.5	अच्छी उर्वरता
1.5% से अधिक	बहुत अच्छी (उच्च उपज क्षमता)

मुख्य तथा सूक्ष्म पोषक तत्व

पौधों की अच्छी वृद्धि और विकास के लिए विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। यह पोषक तत्व दो श्रेणियां की में बाटे होते हैं मुख्य पोषक तत्व तथा सूक्ष्म पोषक तत्व प्रत्येक तत्व की भूमिका पौधे के जीवन चक्र में अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। पोषक तत्वों की संतुलित आपूर्ति से ही स्वस्थ और उत्पादक फैसले प्राप्त की जा सकती हैं। मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों और जैविक स्रोतों का सही उपयोग करके मिट्टी की उर्वरता और फसल उत्पादन क्षमता को बनाए रखा जा सकता है।

मृदा परीक्षण के पश्चात ध्यान देने योग्य बातें

प्रयोगशाला में मृदा जांच हो जाने के बाद प्रयोगशाला विशेषज्ञों द्वारा दी गई जानकारी के हिसाब से ही उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए इसके अलावा भी किसानों को निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–

- ✓ जांच रिपोर्ट में दिए गए pH, N, P, K और सूक्ष्म पोषक तत्वों को ध्यान से पढ़े तथा किस तत्व की कमी या अधिकता है इसका विश्लेषण करें।
- ✓ आवश्यकता से कम या अधिक उर्वरकों का प्रयोग ना करें ऐसा करने से फसल को नुकसान हो सकता है या मिट्टी की गुणवत्ता खराब हो सकती है।
- ✓ जहां तक संभव हो गोबर की खाद, वर्मीकंपोस्ट, हरी खाद आदि का प्रयोग करें तथा जैविक तरीके से मिट्टी की संरचना जलधारण क्षमता और सूक्ष्म जीवों की गतिविधियों को बढ़ाया जा सकता है।
- ✓ एक ही फसल बार–बार लगाने से मृदा के पोषक तत्वों की हानि होती है, जिसे ध्यान में रखकर फसल चक्र अपनाना चाहिए।
- ✓ मृदा की जलधारण क्षमता की सूझबूझ के अनुसार सिंचाई करनी चाहिए, अत्यधिक जल उपयोग करने से पोषक तत्व बह सकते हैं।
- ✓ हर दो–तीन वर्षों में मिट्टी की दोबारा से जांच करनी चाहिए, जिससे पोषक तत्वों की सही यथा स्थिति का आकलन किया जा सके।
- ✓ अम्लीय मृदाओं में भूमि सुधारक चूना, राख, प्रेसमड आदि का प्रयोग मृदा की अम्लता के मात्रा के हिसाब से करना चाहिए, तथा अमल रोधी फसलों जैसे– सोयाबीन, गेहूं, मक्का, राई, आलू, जौ आदि उगाना चाहिए।
- ✓ लवणीय और क्षारीय मृदा में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। इनके सुधार के लिए जिप्सम, गंधक पाइराइट का प्रयोग करना चाहिए, तथा उच्च लवण सहन करने वाली फैसले जैसे दृ कपास, पालक, चुकंदर, मूली, जौं, ढैंचा, शलजम आदि तथा मध्यम लवण रोधी फैसले जैसे दृ टमाटर, अरहर, गाजर, आल, अंगूर, लौकी, करेला, अमरुद, बरसीम, रिजका, गेहूं राई आदि और साथ ही न्यूनतम लवण रोधी फैसले जैसे दृ चना, उड़द, मूंग, से, नाशपाती, बादाम, नींबू, सेम, ज्वार आदि फसलों को उगाना चाहिए।

मृदा परीक्षण के परिणाम

मृदा परीक्षण मिट्टी की उर्वरता पोषक तत्वों की उपलब्धता और खेती योग्य स्थिति को दर्शाते हैं। यह जानकारी किसानों को यह तय करने में मदद करती है कि कौन से उर्वरक किस मात्रा में और किस समय पर डालने चाहिए। मृदा परीक्षण के परिणामों के आधार पर फसल के लिए उर्वरकों का चयन और प्रबंध किया जाए तो उत्पादन की गुणवत्ता और मृदा गुणवत्ता दोनों में वृद्धि संभव है।

■■■

ISSN: 3049-2211

सब्जियों में नैनो उर्वरक का उपयोग: लाभ और सावधानियाँ

सतवीर सिंह
पीएच.डी. शोधार्थी, सब्जी विज्ञान विभाग
बागवानी महाविद्यालय, डॉ. यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौनी, सोलन, हिमाचल प्रदेश।

परिचय

कृषि में उत्पादकता और स्थिरता बढ़ाने के लिए आधुनिक तकनीकों का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। नैनो उर्वरक, जो नैनो तकनीक पर आधारित हैं, सब्जी फसलों की खेती में एक क्रांतिकारी नवाचार के रूप में उभरे हैं। नैनो उर्वरक सूक्ष्म कणों (1–100 नैनोमीटर) के रूप में पोषक तत्वों को प्रदान करते हैं, जो पौधों द्वारा आसानी से अवशोषित हो जाते हैं। ये उर्वरक पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में अधिक प्रभावी और पर्यावरण के अनुकूल माने जाते हैं। यह लेख सब्जियों में नैनो उर्वरक के उपयोग, उनके लाभ, सावधानियों, और विशिष्ट उदाहरणों पर विस्तृत चर्चा करता है, ताकि किसानों और कृषि वैज्ञानिकों को इस तकनीक का उचित उपयोग करने में सहायता मिले।

नैनो उर्वरक क्या हैं?

नैनो उर्वरक ऐसे उर्वरक हैं जिनमें पोषक तत्व नैनोस्केल कणों के रूप में उपलब्ध होते हैं। ये कण अत्यंत छोटे होते हैं, जिसके कारण वे पौधों की कोशिकाओं में आसानी से प्रवेश कर सकते हैं। नैनो उर्वरक विभिन्न प्रकार के हो सकते हैं, जैसे–

1) नैनो–एनकैप्सुलेटेड उर्वरक: पोषक तत्वों को नैनो कणों में संलग्न किया जाता है, जो धीरे–धीरे पोषक तत्वों को मुक्त करते हैं।

2) नैनो–कम्पोजिट उर्वरक: नैनो सामग्री के साथ मिश्रित पोषक तत्व, जो मिट्टी में स्थिरता प्रदान करते हैं।

3) नैनो–बायो उर्वरक: सूक्ष्मजीवों के साथ नैनो कणों का संयोजन, जो मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाते हैं।

4) नैनो–आधारित सूक्ष्म पोषक तत्व: जस्ता, लोहा, और मैंगनीज जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों को नैनो रूप में प्रदान किया जाता है।

सब्जी फसलों में नैनो उर्वरक के लाभ

नैनो उर्वरक का उपयोग सब्जी फसलों में कई लाभ प्रदान करता है, जो निम्नलिखित हैं:

1) पोषक तत्वों का बेहतर अवशोषण: नैनो उर्वरक के छोटे कण पौधों की जड़ों और पत्तियों द्वारा आसानी से अवशोषित हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, नैनो–जस्ता (Nano-Zinc) टमाटर और बैंगन जैसे पौधों में जस्ता की कमी को तेजी से दूर करता है, जिससे फूल और फल सेट में सुधार होता है।

2) कम मात्रा में अधिक प्रभाव: पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में नैनो उर्वरक कम मात्रा में उपयोग किए जाते हैं, जिससे लागत और पर्यावरणीय प्रभाव कम होता है। उदाहरण के लिए, नैनो–यूरिया (Nano-Urea) का छिड़काव प्याज और गोभी की फसलों में नाइट्रोजन की आवश्यकता को 50% तक कम कर सकता है।

3) पर्यावरणीय स्थिरता: नैनो उर्वरक मिट्टी और जल में पोषक तत्वों के रिसाव (leaching) को कम करते हैं, जिससे भूजल प्रदूषण और मिट्टी की उर्वरता हानि को रोका जा सकता है।

नैनो यूरिया नैनो जिंक नैनो कॉपर

4) उपज और गुणवत्ता में वृद्धि: नैनो उर्वरक पौधों की वृद्धि, फलन, और रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं। उदाहरण के लिए, नैनो–कैल्शियम का उपयोग टमाटर में ब्लॉसम एंड रॉट (Blossom End Rot) की समस्या को कम करता है, जिससे फल की गुणवत्ता में सुधार होता है।

5) कीट और रोग प्रबंधन: कुछ नैनो उर्वरक, जैसे नैनो–सिल्वर और नैनो–कॉपर, जीवाणुरोधी और कवकनाशी गुण प्रदान करते हैं, जो सब्जी फसलों को रोगों से बचाते हैं। उदाहरण के लिए, नैनो–सिल्वर का उपयोग आलू में लेट ब्लाइट (Late Blight) को नियंत्रित करने में प्रभावी है।

6) जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन: नैनो उर्वरक सूखा और गर्मी जैसी चरम जलवायु परिस्थितियों में पौधों की सहनशीलता को बढ़ाते हैं। उदाहरण के लिए, नैनो–पोटैशियम टमाटर और मिर्च की फसलों में पानी के तनाव को कम करता है।

विशिष्ट सब्जी फसलों पर नैनो उर्वरक का प्रभाव

1. टमाटर

टमाटर की फसल में नैनो–यूरिया और नैनो–जस्ता का उपयोग पौधों की वृद्धि और फल सेट को बढ़ाता है। नैनो–कैल्शियम का पर्णीय छिड़काव (foliar spray) ब्लॉसम एंड रॉट को कम करता है। इसके अलावा, नैनो–सिल्वर का उपयोग बैक्टीरियल विल्ट और लीफ कर्ल वायरस जैसे रोगों को नियंत्रित करने में सहायक है।

उदाहरण: भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) के एक अध्ययन में पाया गया कि नैनो–यूरिया का उपयोग टमाटर की उपज को 15–20% तक बढ़ा सकता है, जबकि पारंपरिक यूरिया की तुलना में 50% कम मात्रा की आवश्यकता होती है।

2. आलू

आलू में नैनो–पोटैशियम और नैनो–फॉस्फोरस का उपयोग कंद (जनइमत) के विकास और गुणवत्ता को बेहतर बनाता है। नैनो–सिल्वर का उपयोग लेट ब्लाइट जैसे कवक रोगों को नियंत्रित करने में प्रभावी है।

उदाहरणः नैनो–जस्ता का पर्णीय छिड़काव आलू की फसल में जस्ता की कमी को दूर करता है, जिससे कंद का आकार और वजन बढ़ता है।

3. गोभी (पत्तागोभी और फूलगोभी)

गोभी और फूलगोभी में नैनो–नाइट्रोजन और नैनो–कैल्शियम का उपयोग सिर (head) के गठन को बढ़ावा देता है। नैनो–कॉपर का उपयोग डायमंडबैक मोथ और ब्लैक रॉट जैसे रोगों को कम करने में सहायक है।

उदाहरणः नैनो–कैल्शियम का उपयोग फूलगोभी में सिर की गुणवत्ता को बेहतर बनाता है और टिप बर्न (Tip Burn) की समस्या को कम करता है।

4. प्याज

प्याज में नैनो–यूरिया और नैनो–पोटैशियम का उपयोग बल्ब के आकार और भंडारण क्षमता को बढ़ाता है। नैनो–सिल्वर और नैनो–कॉपर का उपयोग पर्पल ब्लॉच और थ्रिप्स जैसे कीटों और रोगों को नियंत्रित करता है।

उदाहरणः नैनो–यूरिया का पर्णीय छिड़काव प्याज की उपज को 10–15% तक बढ़ा सकता है और बल्ब सड़न की समस्या को कम करता है।

5. बैंगन

बैंगन में नैनो–जस्ता और नैनो–मैंगनीज का उपयोग फल सेट और रंग को बेहतर बनाता है। नैनो–सिल्वर का उपयोग फल बोरर और बैक्टीरियल विल्ट जैसे रोगों को नियंत्रित करता है।

उदाहरणः नैनो–जस्ता का उपयोग बैंगन में फूल गिरने की समस्या को कम करता है, जिससे उपज में 20: तक की वृद्धि हो सकती है।

नैनो उर्वरक के उपयोग की सावधानियाँ

हालांकि नैनो उर्वरक कई लाभ प्रदान करते हैं, लेकिन उनके उपयोग में कुछ सावधानियाँ बरतनी आवश्यक हैं–

1) उचित मात्रा और समयः नैनो उर्वरक की अत्यधिक मात्रा या गलत समय पर उपयोग पौधों और मिट्टी को नुकसान पहुँचा सकता है। उदाहरण के लिए, नैनो–यूरिया का अत्यधिक छिड़काव पत्तियों को जला सकता है। हमेशा विशेषज्ञों की सलाह के अनुसार मात्रा और समय का निर्धारण करें।

2) पर्यावरणीय प्रभावः नैनो कणों का लंबे समय तक उपयोग मिट्टी और जल में संचय (Acumulation) का कारण बन सकता है, जिसके दीर्घकालिक प्रभावों का अभी पूरी तरह से अध्ययन नहीं किया गया है। इसलिए, नैनो उर्वरकों का उपयोग नियंत्रित और सीमित मात्रा में करें।

3) मानव स्वास्थ्यः नैनो कणों का अत्यधिक संपर्क मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव डाल सकता है। नैनो उर्वरकों के उपयोग के दौरान मास्क और दस्ताने जैसे सुरक्षात्मक उपकरणों का उपयोग करें।

4) मिट्टी और फसल की जाँचः नैनो उर्वरक का उपयोग करने से पहले मिट्टी और फसल की पोषक तत्वों की आवश्यकता का विश्लेषण करें। उदाहरण के लिए, नैनो–जस्ता का उपयोग केवल तभी करें जब मिट्टी में जस्ता की कमी हो।

5) नियामक अनुपालनः नैनो उर्वरकों का उपयोग करने से पहले स्थानीय कृषि नियमों और दिशानिर्देशों का पालन करें, क्योंकि कुछ देशों में इनके उपयोग पर प्रतिबंध या सीमाएँ हो सकती हैं।

6) लागत प्रबंधनः नैनो उर्वरक पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में महंगे हो सकते हैं। इसलिए, लागत–लाभ विश्लेषण करके ही इनका उपयोग करें।

नैनो उर्वरक के उपयोग की तकनीकें

- **पर्णीय छिड़काव (Foliar Spray):** नैनो–यूरिया, नैनो–जस्ता, और नैनो–कैल्शियम जैसे उर्वरकों को पत्तियों पर छिड़काव के रूप में उपयोग किया जाता है। यह विधि विशेष रूप से टमाटर, बैंगन, और गोभी जैसी फसलों में प्रभावी है।
- **मिट्टी में प्रयोगः** नैनो–कम्पोजिट उर्वरकों को मिट्टी में मिलाया जा सकता है, जो धीरे–धीरे पोषक तत्वों को मुक्त करते हैं। यह विधि आलू और प्याज जैसी फसलों के लिए उपयुक्त है।
- **बीज उपचारः** नैनो–जस्ता और नैनो–मैंगनीज का उपयोग बीज उपचार के लिए किया जा सकता है, जो अंकुरण और प्रारंभिक वृद्धि को बढ़ाता है।
- **सिंचाई के साथ उपयोग (Fertigation):** ड्रिप सिंचाई के माध्यम से नैनो उर्वरकों का उपयोग जल और पोषक तत्वों की दक्षता को बढ़ाता है। यह विधि टमाटर और मिर्च की खेती में उपयोगी है।

निष्कर्ष

नैनो उर्वरक सब्जी फसलों की खेती में एक आशाजनक तकनीक हैं, जो पोषक तत्वों के अवशोषण, उपज, और पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ाते हैं। टमाटर, आलू, गोभी, प्याज, और बैंगन जैसी फसलों में नैनो–यूरिया, नैनो–जस्ता, और नैनो–कैल्शियम जैसे उर्वरकों का उपयोग उपज और गुणवत्ता में सुधार करता है। हालांकि, इनके उपयोग में सावधानी बरतना आवश्यक है ताकि पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर कोई नकारात्मक प्रभाव न पड़े। किसानों को नैनो उर्वरकों के उपयोग के लिए प्रशिक्षण और विशेषज्ञों की सलाह लेनी चाहिए। भारत जैसे कृषि–प्रधान देश में, नैनो उर्वरक जलवायु परिवर्तन और खाद्य सुरक्षा की चुनौतियों का सामना करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं, बशर्ते इनका उपयोग जिम्मेदारी और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ किया जाए।

■■■

ISSN: 3049-2211

धीमी गति से खराब होने वाले कृषि उत्पादों के लिए प्रसंस्करण तकनीकें

सत्येन्द्र कुमार मौर्या– शोध छात्र, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी।
प्रद्युम– राजमाता विजयराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर।
उमा पंत– शोध छात्रा, गोविंद वल्लभ पंत कृषि वि० वि०, पंतनगर।
पूजा पलड़िया– शोध छात्रा, गोविंद वल्लभ पंत कृषि वि० वि०, पंतनगर।
डा० अवनीश कुमार सिंह– सहायक प्राध्यापक, बिहार कृषि वि० वि०, सबौर।

धीमी गति से खराब होने वाले कृषि उत्पादों की शेल्फ लाइफ बहुत अधिक होती है जिसके कारण वह लंबे समय तक खराब नहीं होते हैं लेकिन फिर भी एक निश्चित समय के पश्चात यह उत्पाद खराब होने लगते हैं। इन उत्पादों के खराब होने के प्रमुख कारण ऑक्सीकरण, एंजाइम्स की गतिविधि, सूक्ष्म जीवाणुओं की वृद्धि तथा नमी हो सकती है। जिनको व्यर्थ होने से बचाने के लिए विभिन्न प्रकार की प्रसंस्करण तकनीकों का प्रयोग किया जाता है।

उद्देश्य

1. कटाई उपरान्त होने वाले नुकसान को कम करना ।
2. पोषण की गुणत्ता को बनाये रखना ।
3. रखरखाव, भण्डारण और परिवहन को बेहतर बनाना।
4. उत्पाद का मूल्य संवर्धन कर उसके उपयोग को विविध बनाना।
5. भण्डारण अवधि (शेल्फ लाइफ) को बढ़ाना आदि।

खाद्यान्नः

चावल, गेहूं, मक्का, जौ और दालें विश्व की एक बड़ी आबादी का मुख्य आहार हैं। इनका कुशल कटाई उपरांत प्रसंस्करण, खाद्य सुरक्षा, आर्थिक स्थायित्व और आपूर्ति श्रृंखला की निरंतरता सुनिश्चित करने के लिए अत्यंत आवश्यक है। प्रमुख चिंताओं में मात्रात्मक और गुणात्मक हानियों को न्यूनतम करना और पोषण व बाज़ार मूल्य को अधिकतम करना शामिल है।

कटाई और प्राथमिक प्रसंस्करण

गहाई (Threshing): यांत्रिक थ्रेसर का प्रयोग करके अनाज को न्यूनतम हानि के साथ अलग करते हैं, जिससे कम समय में अनाज की थ्रेसिंग हो जाती है।

सफाई (Cleaning): अनाज में आयी विभिन्न प्रकार की अशुद्धियों जैसे– धूल, पत्थर तथा फसल अवशेष आदि को प्रथाक्कृत करने हेतु वायुवीय प्रथक्करण और कंपन चालित छलनियों का प्रयोग किया जाता है जिससे अनाज साफ रहे।

सुखाना (Drying): सुरक्षित भण्डारण हेतु अनाज को धूप अथवा यांत्रिक ड्रायर्स की मदद से सुखाते हैं जिससे अनाज में नमी का स्तर 12–14% तक कम किया जा सके ताकि भण्डारण में लगने वाले सूक्ष्म जीवों की सक्रियता घटे।

छिलके हटाना व मिलिंगः धान को रबर रोल शेलर्स या डिस्क हलर से छिलका हटाकर मिलिंग द्वारा पॉलिश किया हुआ चावल तैयार किया जाता है।

खाद्यान्नों के प्रसंस्करण का प्रवाह चार्ट

कटाई (Harvesting)
⬇
मड़ाई (Threshing)
⬇
सफाई (Cleaning)
(धूल, कंकड़, भूसी आदि निकालना)
⬇
सुखाना (Drying)
नमी घटाना (12–14% तक)
⬇
छंटाई और ग्रेडिंग (Sorting & Grading)
(आकार और गुणवत्ता के अनुसार)
⬇
भंडारण (Storage)
⬇
प्रसंस्करण (Processing)
(गेहूं: चक्की में पीसना (आटा)
(चावलः धान की भूसी हटाना (मिलिंग)
(मक्काः दरदरा या फूला हुआ मक्का बनाना)
⬇
पैकेजिंग (Packaging)
उपभोक्ता पैक तैयार करना
⬇
विपणन/वितरण
(Marketing/Distribution)

ISSN: 3049-2211

भंडारण तकनीकें

खाद्यान्नों का भंडारण एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिससे अनाज की गुणवत्ता और मात्रा को लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

विधि	विवरण
कच्चे गोदाम	गाँवों में अस्थायी भंडारण के लिए उपयोग होता है, पर ये कम सुरक्षित होते हैं।
पक्के गोदाम	ईंट और सीमेंट से बने स्थायी संरचनाएं होती हैं, जो सुरक्षित भंडारण प्रदान करती हैं।
धातु के बिन (Metal Bins)	ये वायुरोधी होते हैं और कीटों से सुरक्षा प्रदान करते हैं।
साइलो (Silos)	बड़ी मात्रा में अनाज के लिए उपयोग किए जाते हैं, आधुनिक और यांत्रिक प्रणाली पर आधारित होते हैं।
पीपी बैग (PP Bags)	छोटे स्तर पर भंडारण के लिए उपयोग होते हैं, इन्हें साफ और सूखी जगह पर रखना चाहिए।

पारंपरिक भंडारण:

परंपरागत अनाज भंडारण हेतु अनेक प्रकार के उपाय अपनाए जाते रहे हैं जिनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार से हैं–

क्रमांक	भंडारण विधि का नाम	विवरण
1	कच्ची कोठी (Earthen Bin)	मिट्टी, भूसे और गोबर से बनी कोठियाँ; ग्रामीण क्षेत्रों में उपयोग होती हैं। इनमें अनाज को थोक में रखा जाता है।
2	पक्की दीवारों वाली कोठी	ईंट और मिट्टी से बनी कोठियाँ जो ग्रामीण क्षेत्रों में वर्षों से उपयोग हो रही हैं। ये अपेक्षाकृत सुरक्षित होती हैं।
3	मिट्टी के घड़े या हांडी	दालें और बीज कम मात्रा में रखने के लिए इस्तेमाल होते हैं। ऊपर से कपड़े और मिट्टी से ढका जाता है।
4	भुस्सी से लेपित बोरे	बोरों को गोबर या मिट्टी–भूसी के लेप से सुरक्षित किया जाता है जिससे कीट नहीं घुस पाते।
5	बांस या लकड़ी की टोकरी	इन्हें अंदर से गोबर–मिट्टी के लेप से सील कर दिया जाता है। यह विधि हवादार होती है और सूखे क्षेत्र में उपयुक्त होती है।
6	मिट्टी के गड्ढे (Underground Pits)	जमीन में गड्ढा खोदकर अनाज रखा जाता है और फिर उसे गोबर, मिट्टी और राख से सील कर दिया जाता है। यह विधि लंबे समय के लिए उपयुक्त है लेकिन उचित देखभाल आवश्यक है।

■■■

ISSN: 3049-2211

मृदा उर्वरता में सुधार के लिए फसल अवशेष प्रबन्धन

सुनील कुमार– पी.एच.डी.
डा.अभिशेक तिवारी– सहायक आचार्य
मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान, छत्रपति साहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर।

विश्व आबादी के विस्तार और बढ़ती खाद्य मॉग के बीच किसानों को मिट्टी के स्वास्थ्य से समझौता किए बिना कृषि उत्पादकता में सुधार करने की आवष्यकता है। भारत एक कृषि प्रधान देश है जहॉ मृदा उर्वरता खेत की सफलता का मूल आधार है। मृदा की उत्पाकता बनाए रखने के लिए जैविक तत्वों की उपस्थिति अत्यन्त आवश्यक होती है। फसल अवशेष जैसे कि पुआल, भूसा, पत्तियॉ डण्ठल आदि का उचित प्रबन्ध न केवल मृदा की उर्वरता बढ़ाता है बल्कि पर्यावरण संरक्षण में भी सहायक होता है।

देश के कई क्षेत्र ऐसे है जहॉ अगली फसल की बुवाई तथा खेत तैयार करने के लिए किसान फसलों के अवशेषों को जला देते है , फसल अवशेष को जलाने से पर्यावरण प्रदूषित होता जा रहा है साथ ही साथ मिट्टी में उपलब्ध कई पोषक तत्व नष्ट होने के कारण मिट्टी की उर्वरा शक्ति क्षीण होती है। अगर किसान इन फसल अवशेषों को खेत में खाद के रूप में मिश्रण बनाकर खेत में मिलाएगे तो न केवल मिट्टी की उपजाऊ क्षमता विकसित होगी बल्कि खाद पर होने वाले अतिरिक्त खर्च पर करीब दो हजार रूपयें प्रति हेक्टयर की बचत सम्भव होगी।

फसल अवषेश प्रबन्धन क्या है ?

फसल अवशेष प्रबन्धन (CRM) खेत की जुताई कार्यों की आवृत्ति और तीव्रता को कम करने तथा पिछली फसल कटाई से बचे हुए मलवे की मात्रा बढ़ाने पर आधारित रणनीति है। ''फसल कटाई के बाद खेत में बचे अवशेषों को जलाने के बजाए उनका पुनः उपयोग करना ही फसल अवशेष प्रबन्धन कहलाता है।''

मृदा उर्वरता में सुधार हेतु फसल अवशेष प्रबन्धन के लाभ

- **मृदा स्वास्थ्य और उर्वरता में सुधारः** फसल अवशेष प्रबन्धन से लम्बे समय में मिट्टी की उर्वरता और समग्र मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार हो सकता है। जुताई के बाद खेत में बची हुई बहुत सी वनस्पति सामग्री उपज की वृद्धि में उपज में योगदान देती है।
- **जैविक पदार्थ की मात्रा में वृद्धिः** फसल अवशेष मृदा में मिलकर उसमें ह्यूमस का निर्माण करते है।
- **जड़ वृद्धि को बढ़ावा देनाः** फसलों की जड़ों बड़ा करने में सहायक होता है जिससे फसलों की जड़ें अधिक पोषक तत्व को समाहित कर सकती है।
- **मृदा सुक्ष्मजीव गतिविधि में वृद्धिः** जैविक पदार्थ सूक्ष्यजीवों के लिए भोजन का कार्य करते है जिससे मृदा में पोषक तत्वों की (Natural Nutrient cycling) अच्छी रहती है।
- **पोशक तत्वों की आपूर्तिः** फसल अवशेष में N_2 , P_2O_5 , K_2O और Micro Nutirent मौजूद होते है जो मृदा में मिलकर फसल को पोषण प्रदान करते है।
- **मृदा संरक्षचना और जल धारण क्षमता में सुधारः** फसल अवशेष मृदा को ढीला व छिद्रयुक्त बनाते है जिससे जल का अवशोषण अच्छा होता है।
- **मृदा क्षरण की रोकथामः** फसल अवशेषों की परत मिट्टी को बारिश और हवा से बचाती है।

खेत में फसल अवशेष जलाने से हानियॉ

- जब खेत में अवशेष जलाया जाता है तो मिट्टी का तापमान बढ़ जाता है इसके साथ–साथ कई लाभकारी सूक्ष्यजीव जलकर नष्ट हो जाते है।
- फसल अवषेश जलाने से वातावरण में कई हानिकारक गैसे जैसे– कार्बन मोनोआक्साइड, कार्बन डाई आक्साइड, नाइट्रोआक्साइड की मात्रा बढ़ जाती है और वातावरण प्रदूषित हो जाता है।
- मृदा में उपस्थित जरूरी पोषक तत्व जैसे N_2 , P_2O_5 , K, S जलकर नष्ट हो जाते है।

फसल अवशेष प्रबन्धन की विधियॉ

1. **रिज टिलेजः** किसान ऊॅची क्यारियॉ या लकीरे तैयार करते है जिनके बीचे पौधों के अवशेष जमा हो जाते है जिससे पानी का प्रवेश बेहतर हो जाता है।
2. **कम्पोस्टिंगः** फसल अवशेष को गोबर और अन्य जैविक कचरे के साथ मिलाकर खाद बनाया जाता है।
3. **मल्चिंगः** फसल अवशेषों को खेत की ऊपरी सतह पर बिछा दिया जाता है जिससे नमी का संरक्षण रहता है इस कारण खरपतवार की वृद्धि बहुत कम होती है।
4. **बायोडिक्म्पोजरः** जीवाणु आधारित बायोडिकम्पोजर का छिड़काव करके फसल अवषेशों को तेजी से सडाया जाता है।

चुनौतियॉ और समाधान

1. चुनौतीः फसल अवषेश जलाने की परम्परा।

समाधानः किसानों को जागरूक व विकल्प उपलब्ध कराना।

2. चुनौतीः यंत्रों की कमी।

समाधानः समुचित एंव युक्ति अनुसार यंत्रों का विकास एंव निर्माण।

3. कीट , रोग और खरपतवार प्रबन्धनः योग्य क्रियावंयन की कमी।

समाधानः खेत में बची हुई पौधों की सामग्री कीटों और रोग वाहकों के लिए प्रजनन भूमि के रूप में काम कर सकती है। समुचित जानकारी व विश्लेषण की आवश्यकता।

निष्कर्ष

जिस प्रकार हमें एक शुद्ध वातारवरण प्राप्त हुआ है हमारी जिम्मेदारी है कि आने वाली पीढ़ी का जीवन भी अच्छा एंव स्वास्थ्य हो। इसके लिए हमें जरूरी कदम उठाना चाहिए। जैसे कि फसल अवशेषों को जलाना नहीं चाहिए, इससे पर्यावरण प्रदूषित होता है और मृदा के उपजाऊ शक्ति भी क्षीण हो जाती है। फसल अवशेष प्रबन्धन एक समग्र दृष्टिकोण है जो मृदा उर्वरता और पर्यावरण को सरंक्षित करने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। यदि किसान भाई इस अपनाते है तो न केवल उनकी भूमि की उत्पापदकता बढ़ती है बल्कि रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता भी घटेगी। इस प्रकार हम अपनी मृदा के जीवांश पदार्थ व उर्वरा शक्ति वृद्धि करके जमीन को खेती योग्य सुरक्षित रख सकते है और उसकी उपजाऊ शक्ति को भी बरकरार रख सकते है।

कृषक मंच
ISSN: 3049-2211

मिर्च के प्रमुख कीटों का जैविक नियंत्रण

डॉ0 रोहित मौर्य– विषय वस्तु विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केंद्र, तुर्की, मुजफ्फरपुर (बिहार)।
सुरेश कुमार– शोध छात्र, बी. बी. ए. यू., लखनऊ, (उत्तर प्रदेश)।
डा० अवनीश कुमार सिंह एवं डा० अनुकिरण साहू– सहायक प्राध्यापक, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर (बिहार)।
शिवम कुमार सिंह– रिसर्च एसोसिएट, राजेंद्र प्रसाद केंद्रीय कृषि वि वि, पूसा (बिहार)।

मिर्च की फसल प्रमुख नगदी फसलों में अपना स्थान रखती है। मिर्च के विशिष्ट गुणों की वजह से मसाला परिवार में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। हरी और लाल दोनों अवस्था में मिर्च भोजन को स्वादिष्ट बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मिर्च का तीखापन केप्सेसिन की मात्रा पर निर्भर करता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से मिर्च में विटामिन ए व सी तथा कुछ खनिज लवण पाये जाते है। जो मानव स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। लेकिन इस फसल को अनेक कीट एवं रोग प्रभावित करते है। जिससे इसके उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसलिए इन कीट एवं रोग की रोकथाम आवश्यक है।

मिर्च में लगने प्रमुख कीट एवं उनका जैविक प्रबंधन

दीमक– यह सर्वभक्षी कीट है। इसका प्रकोप मुख्य रूप से रेतीली मिट्टी, कम पानी और अधिक तापमान की अवस्थाओं में अधिक होता है। मिर्च की फसल के विकास की किसी भी अवस्था में यह नुकसान पहुंचा सकता है। ये कीट जमीन के नीचे मिट्टी में अपना घर बनाकर रहते हैं, एवं मिर्च की जड़ों को खाकर नुकसान पहुँचाते हैं। इस वजह से पौधे जगह–जगह से झुण्डों में सुख जाते हैं और खींचने पर आसानी से उखड़ जाते हैं। खेत में सूखे हुए पौधों को जगह–जगह खोदने पर दीमक आसानी से दिखाई देती है। रानी दीमक अनुकूल परिस्थितियों में प्रतिदिन हजारों अण्डे देती है। शुष्क क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप अन्य स्थानों की तुलना में अधिक होता हैं। इस प्रकार मिर्च के पौधे सूखने से मिर्च की पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता हैं।

रोकथाम

1. खेत व खेत के आसपास दीमक के घरों और खरपतवारों को नष्ट करें।
2. खेत में काम ली जाने वाली गोबर या अन्य कोई भी खाद पूर्ण रूप से सड़ाकर प्रयोग करनी चाहिए।
3. खेत में नीम की खली 200 किलोग्राम प्रति हैक्टयर की दर से खेत की अन्तिम जुताई के समय भूमि में भली भांति मिलाना चहिए।
4. तम्बाकू के चूरे को पानी मे मिलाकर 15 दिन सडायें और 10–12 लीटर पानी सिंचाई के साथ खेत में देना चाहिए।

सफेद लट– इसकी लटे (ग्रब) भूमि में रहकर जड़ों को खाती है। जिससे पौधे कमजोर होकर पीले पड़ कर सूख जाते हैं। पूर्ण व्यस्क लट (ग्रब) मुड़ी हुई अर्धचन्द्रास रूप में भूमि के अन्दर रहती है। मानसून या इससे पूर्व की भारी वर्षा और कुछ क्षेत्रों के खेतों में पानी लगाने पर जमीन से भृगों (व्यस्क या बीटल) का निकलना शुरू हो जाता हैं। भृंग रात के समय जमीन से निकलकर परपोषी वृक्षों (खेजरी, बेर, अमरूद, आम आदि) पर बैठते हैं तथा पत्तियों को खाते हैं और खेतों की मिट्टी में अण्डे देते हैं, जिनसे लटें निकलकर पौधों को नुकसान पहुंचाती है। इनका वर्ष में एक ही जीवन काल होता है।

रोकथाम– जहॉ वयस्क भृंगों को परपौषी वृक्षों से रात में पकड़ने की सुविधा हो वहां भृंगों के निकलने के बाद करीब 9 बजे रात्रि को बॉसों की सहायता से परपौषी वृक्षों पर बैठे भृंगों को हिलाकर नीचे गिरायें और एकत्रित कर मिट्टी के तेल मिले पानी (1लीटर तेल एवं 20 लीटर पानी) में डाल कर नष्ट करें।

सफेद मक्खी– इस कीट के शिशु व वयस्क (मक्खी के आकार से बहुत छोटे और इसके पख सफेद रंग के होते है), दोनों ही पत्तियों के कोमल भागों से रस चूस कर काफी नुकसान पहुंचाते हैं। जिससे पत्तियां सिकुड़ जाती है और पौधो की बढ़वार घट जाती है, तथा फल कम लगते है। यह मक्खी एक प्रकार का तरल पदार्थ स्त्रावित करती है, जिस पर काली फफूंदी उत्पन्न हो जाती है, जिससे पौधों के विकास और प्रकाश सन्शलेषण की प्रक्रिया अवरूद्ध हो जाती है। यह जितना नुकसान रस चुस कर नही करती उससे कहीं अधिक विषाणु रोग को फैलाकर करती है।

मोयला– यह कीट चेपा, माहू व लाही के नाम से भी जाना जाता है। यह छोटे आकार व कोमल शरीर वाला होता है। इसकी अवयस्क (पंखरहित) एवं वयस्क (पंखवालें) दोनों अवस्थायें फसल को क्षति पहुँचाती है। जो पौधे के कोमल तनों, पत्ती और पुष्प से रस चूस कर पौधे का विकास रोक देते हैं। जिन स्थानो पर मोयला बैठता है। वहां एक प्रकार का लसीला और शहद जैसा पदार्थ स्त्रावित करता हैं, जिस पर बाद में काली फफूंदी उत्पन्न हो जाती है। इस कीट की पंख वाली अवस्था रोगों के प्रसार में भी सहायक होती है।

पर्णजीवी– यह काले पीले रंग का बहुत छोटा परन्तु आकार में लम्बा होता है। इसके छः पैर व पंख रोयेदार या झालरदार होते हैं। इस कीट के शिशु और वयस्क दोनो ही कोमल तथा नई पत्तियों के नीचली सतहों से हरा पदार्थ खुरच कर उनका रस चूसते हैं। जिससे पत्तियों पर छोटे–छोटे सफेद या भूरे निशान बन जाते है और पत्तियां सिकुड़ जाती है। ज्यादा लम्बे समय तक प्रकोप रहने से पत्तिया सूख जाती है।

बरूथी– मिर्च की फसल में यह बहुत छोटे–छोटे आठ पैरो वाले जीव, कीड़ों जैसे ही होते है और सामान्यतः नजर नही आते हैं। इसे मकडी नाम से भी जाना जाता है। ये पत्तियों की निचली सतह से रस चूसती है। इनके लगातार रस चूसने से पत्तियो पर सफेद निशान बन जाते है और पौधो पर फल कम संख्या में लगते हैं।

हरा तेला– यह फुदकने वाले बहुत छोटे या मध्यम आकार के हरे रंग के जीव अधिकतर पत्तियों की निचली सतह पर रहते हैं और

पत्ती पर तिरछे चलते हैं। इनके शिशु और वयस्क दोनो ही पौधे से रस चूसकर उसे कमजोर बना देते हैं। इसके अलावा यह कीट विषाणु रोग के प्रसार में भी सहायक होते हैं। यह कीट अपने मुंह से पत्तियों पर एक प्रकार का टाक्सिन छोडकर भी नुकसान पहुंचाते हैं।

फल छेदक– मिर्च की फसल में इस कीट की लटटें फलों में छेद कर अन्दर प्रवेश कर फलों को खाती हैं। इनके प्रकोप से फल काले व सड़ जाते हैं। इससे उत्पादन में कमी के साथ–साथ फलों की गुणवत्ता में भी कमी आ जाती है। यह कीट मिर्च के साथ अन्य फसलों जैसे कपास, टमाटर, चना इत्यादि में भी नुकसान पहुंचाता हैं।

रस चुसक व फल छेदक कीटों की जैविक रोकथाम

1. पौधशाला (नर्सरी) में पौधों को 40 मेस वाली सफेद नाइलोन जाली से ढककर रखें।
2. मिर्च की फसल में रस चूसक कीटों के प्रकोप की निगरानी और रोकथाम हेतु पीले चिपचिपे पाश (ट्रेप) 10 प्रति हैक्टर के हिसाब से लगायें।
3. मिर्च की फसल में परभक्षी कीट *काइसोपरला कारनिए* 2 ग्रब प्रति पौधा की दर से खेत में छोड़ने की व्यवस्था करें।
4. मिर्च की फसल में फलछेदक कीट के व्यस्कों हेतु फेरोमोन पाश, 5 पाश प्रति हेक्टेयर के हिसाब से काम में लें।
5. मिर्च की फसल में बेसीलस थूरिनजियेन्सिस कस्टाकि नामक जीवाणु का 1.5 लीटर घोल प्रति हैक्टर पानी में मिलाकर छिडकाव करने से फल छेदक कीट में रोग पैदा कर उन्हें नियन्त्रण करने में मदद करता है।
6. मिर्च की फसल में *ट्राइकोग्रामा ब्रोसिलियेन्सिस* या *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* अण्ड परजीवी को खेत में 50000 अण्डे प्रति हैक्टर की दर से छोडें। यह परजीवी फल छेदक कीट के अण्डों में अपने अण्डे देता है, जिससे फल छेदक कीट के अण्डे नष्ट हो जाते हैं।
7. मिर्च की फसल में न्यूक्लियर पालीहाइड्रोसिस वाइरस (एन पी वी) 250 एल ई का 1 लीटर प्रति हैक्टर के हिसाब से फूलन से फलन तक तीन छिडकाव करने से फल छेदक कीट को कम किया जा सकता है।

जैव आधारित कीट प्रबंधन माड्यूल

मिर्च की फसल में प्रमुख नाशी कीटों और लीफ कर्ल के प्रबंधन हेतु 30 व 40 दिन की फसल अवस्था पर आवश्यकतानुसार एजाडिरेक्टिन (0.03 प्रतिशत ई सी) 3 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के साथ वर्टिसीलियम मित्र फफूद 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी का छिडकाव करें। दूसरा छिडकाव 50 दिन की फसल अवस्था पर केवल वर्टिसीलियम फफूंद 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी का छिडकाव करें। अंतिम दो छिडकाव 70 व 90 दिन की फसल अवस्था पर स्पाइनोसेड 45 एस सी 200 मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यक पानी में घोल कर छिडकाव करें।

ISSN: 3049-2211

कृषक मंच - जुलाई 2025 संस्करण

लोकप्रिय लेखों के लिए आमंत्रण

वेबसाइट: krishakmanch.com

अंतिम तिथि: 25 जुलाई 2025

लेख के विषय:

- कृषि विज्ञान के प्रमुख क्षेत्र: एग्रोनॉमी, बागवानी, कीट विज्ञान, रोग विज्ञान, कृषि प्रसार, कृषि अर्थशास्त्र, जैव प्रौद्योगिकी आदि।
- नवीनतम कृषि तकनीकें।
- फसल प्रबंधन एवं रोग नियंत्रण।
- जैविक खेती एवं प्राकृतिक कृषि।
- जल संरक्षण व सिंचाई तकनीकें।
- सरकारी योजनाएं।

हमारे व्हाट्सएप समूह से जुड़ें: